सुख साधन ग्रन्थमाला ग्रन्थाङ्क नं० ३

मूल्यवान मोती

गुजराती से हिन्दी अनुवादक

श्री० रत्नलालजी बघेलवाल

प्रकाशक

कुँवर मोतीलाल रांका

आनरेरी मैनेजर

सुख-साधन ग्रन्थमाला

और

जैन पुस्तक प्रकाशक कार्यालय

ब्यावर (राजपूताना)

मुद्रक--पद्मसिंह जैन श्रीमज्जैन शास्त्रोद्धार

प्रिंटिंग प्रेस, जौहरी बाजार आगरा।

प्रथमबार } सम्वत्सरी { मूल्य =)॥

१००० प्रति } १९८२ { ५ का १)

निवेदन।

श्री जैन पुस्तक प्रकाशक कार्यालय व्यावर द्वारा सर्व साधारण में जैन धर्म, जीव दया प्रचारक व सदाचार की प्रवृत्ति हेतु नाना प्रकार की पुस्तकें प्रकाशित हुआ करती हैं।

[१] पुस्तकों की बिक्री का मूल्य पुस्तक प्रकाशन के कार्य में ही लगाया जाताहै।

[२] पुस्तक का अविनय न हो इस हेतु कुछ न कुछ मूल्य अवश्य रक्खा जाता है।

[३] कार्यालय के कार्यकर्त्ता निस्वार्थ सेवा कर रहे हैं।

[४] इसके लिये जो सज्जन पुस्तकें लिखकर या अनुवाद करके भेजेंगे उनकी यह संस्था कृतज्ञ होगी।

[५] समाज के विद्वान्, दानवीर, उत्साही और प्रभावना करने वाले आदि सबही प्रकार के सज्जनों का, कार्यालय को प्रत्येक प्रकार की सहायता देने का, कर्त्तव्य है।

निवेदक—मैनेजर।

* ॐ *

प्रिय पाठकगण !

शहर के मध्य में घण्टा घर पर एक, दो, तीन, इस तरह क्रम से दस की आवाज सुनाई दी. जिससे आगगाड़ी की सीटी का जोश भी कम पड़ने लगा इससे प्लेट फार्म पर बैठे हुए मुसाफिर गप्पें बन्दकर अपना २ सामान सम्भाल खड़े हुए, इतने में तो पेशेन्जर ट्रेन धमधमाहट करती " पेटलाद " नामक सुन्दर स्टेशन पर आ पहुँची कम्पार्टमेन्ट में से पेशन्जर एक के बाद एक उतरने लगे. कितने ही

मुसाफिर भीड़ होने से धक्के मुक्की द्वारा दीन जनों को हटा, भीतर घुसने लगे।

उतरे हुए पैशन्जर दरवाजे पर खड़े हो, टिकट कलक्टर को टिकट दे, स्टेशन के बाहिर किराए भाड़े की घोड़े गाड़ियों में बैठ अपने २ घर की ओर रवाना हुए परन्तु उनमें से एक मुसाफिर ग्रीष्म ऋतु की अति ऊष्णता से व्याकुळ हो पंखे द्वारा बदन पर हवा करता इधर उधर घूम रहाथा. ऐसा मालुम होता था कि वह गाड़ी की राह देख रहा हो थोड़े ही समय बाद एक गाड़ी चार घोड़े से जुती हुई स्टेशन पर आ पहुंची वह मनुष्य जल्दी से ही उस गाड़ी में बैठ गया इसी गाड़ी में चक्रिदार पगड़ी बांधे हुए, एक महाशय बैठे हुए थे. यह उनसे प्रेम भरी बातें करने लगा. थोड़े ही समय बाद गाड़ी घर के पास आ पहुंची. तब यह गाड़ी से उतरा। चक्रिदार पगड़ी वाला मनुष्य उससे आज्ञा मांगते हुए कहने लगा कि "आप इस बात से निश्चिन्त रहें, आज सायंकाल को ही उस के यहां जा सब ठीक करलूंगा-जहां मैं गया, वहां से कभी भी पीछे नहीं हटा, बन्दे के काम से आप क्या अन-

भिन्न है, कलही इसका उत्तर ! अब ग्यारह बजे का समय होने आया है-घर पर भी भोजन की राह देख रही होगी इसलिये आज्ञा चाहता हूं ! "अच्छा जाओ ! परन्तु इस बात को दिलमें रखना," "अच्छा ठीक है आपके कथनानुसार ही चलूंगा," ऐसा कह वह मनुष्य जल्दी से रास्ते की ओर चला; पहिला मनुष्य भी धव २ करता खुद के बैठकखाने में गया, कपड़े उतार बेंच पर रख, आराम कुर्सी पर आराम करने लगा, थोड़ेही समय बाद एक नौकर जलपात्र लेकर आया; उसने जलपात्र ले मुख प्रक्षालन कर, गरमी से भिंने हुए मगज को शीतल जल से शान्त किया इतने में भोजन तय्यार होगया तब यह भोजनार्थ भीतर गया भोजन कर पान सुपारी हवा शयन के लिये शयनागार में गया सुख शय्या में लेट कर इधर उधर करवटें लेने लगा कि इतने ही में नौकर ने आ पँखे की रस्सी खींचना शुरू की शीतल वायु की लहर आने से निद्रा देवी ने उस पर आक्रमण कर उसको वश में कर लिया.

मेज पर पड़े हुए कपड़े पर दृष्टि डालने से ज्ञात होता था कि यह वणिक पुरुष है और उपरोक्त बातों

से ज्ञात होता था कि यह कोई श्रीमान् पुरुष है और अपना व्यापार करने के लिये उसने देश विदेशों में दूकानें खोल रक्खी हैं।

यह सब दुकानें इसने क्यों खोल रक्खी थी? साथ ही इसका इतना बड़ा वैभव किस पर था? इसका उत्तर पाठकगणों को इस किताब के पढ़ने से आप ही आप ज्ञात हो जायगा।

पेटलाद शहर में इसका नाम पूर्णता से प्रसिद्ध हो रहा था बच्चे से लगा कर वृद्ध तक इसके नाम से परिचित थे, प्रश्न होता है कि क्या व्यापारी लाइन में? धन में? धर्म में? कुटुम्ब में? परोपकार में या कोई अन्य कारण में प्रसिद्ध था? नहीं! नहीं! मैं कहता हूं कि धन में, धन में इसलिए लक्ष्मी को अनाथों के लिए नहीं, पात्र को दान देने में नहीं, परोपकार करने में नहीं, बटोहियों के आराम के लिए धर्मशाला में नहीं, बाल बालिकाओं के विद्या प्रचारार्थ नहीं, बुद्धिमानों को धर्म व समाज के उद्धार करने को नहीं, परन्तु केवल धन का दुरुपयोग बुरे रास्ते पर करने ही में वह "पेटलाद" शहर में प्रसिद्ध था।

प्रातःकाल होतेही चाय बिस्कुट चढ़ा, स्टोकिन बूट पहिन, बदन में हाफ़ कोट डटा, जेब में टिक २ करती रास्कोप पेटेन्ट वाच लटका. शिरपर शाहमदा घाटी पच्चीस रुपए की पगड़ी झुका हाथ में फैशन-दार छड़ी ले, चश्म पर चश्मा चढ़ा, नेत्र होते हुए भी अन्धा बन, स्वतः मित्र मण्डली को बुला कर, चार घोड़ों की बग्घी को जुता शहर के होटलों का निरीक्षण करते निरन्तर हवाखाने को जाता था, इत्यादि अनेक तरह के मजे उड़ाता था. रात्रि में वेश्या को बुला, नखरे करने वाली वेश्या के हाथ में हाथ मिला, थैंक्यू की ध्वनि के साथ अन्तरङ्ग का आल्हाद बतला, मुंह धना, आराम शैय्या पर उसे बगल में बिठा, प्रीति का पान कर, अच्छी २ वस्तुएं उसे भेट में देता था। सितार, तबला, हारमोनियम के साथ साथ संगीत होना, फोनोग्राफ और ग्रामोफोन का बजाना इत्यादि अनेक युरोपियनोंके फोटो तथा स्त्री पुरुषों को लज्जा आए ऐसे बिभत्स फोटो उसके कमरेमें लगे हुए थे, अतरकी तो कमी ही न थी और आलमारियों में भी ऐसी २ बाटलियां रक्खी हुई थीं कि जिन्हें पीते ही चार गुलाटें आती

थीं इत्यादि कई तरह के कामों में वह धन को पानी की तरह खर्च करता था।

किसी अनाथ अतिथी के आने पर वह उसे मुट्ठी भर अनाज तक नहीं देता था, किन्तु उसे उल्टा नालायक, गधा कहकर तिरस्कृत बचनों से निकाल देता था उसका मन तो सिर्फ पैसा कैसे पैदा करना और मौज कैसे उड़ाना इन्हीं विचारों में मग्न रहता था, यदि यह उतना समय ईश्वर के ध्यान में ही बिताता तथा पैसे का सदुपयोग करता तो सभवत वह दुष्कर भवसागर का पार पा सिद्ध पद को प्राप्त करने में सफल होता।

किन्तु अरे नहीं ! कथन करते मेरी भूल हुई "जैसा पैसा वैसी ही दानत" उसे तो पेसा निन्दित कार्य कर नर्क का अधिकारी होना है, तथा अनन्त भवों में भटकना है अथवा इस संसार रूपी ज्वाला से भस्म होना है, तो फिर क्या उसके अन्तः करण में ऐसे भाव उत्पन्न हो सक्के हैं ? कदापि नहीं ?

उसकी स्त्री का नाम "निर्मला" था सचमुच में वह नामानुसार निर्मल ही थीतात्पर्य यह है कि वह सद्गुणी तथा पतिव्रता थी पति को परमेश्वर तुल्य

देखती थी यहां तक कि प्राणोंसे भी अधिक मानती थी परन्तु यह पुरुष तो इसे पांव की एक जूती के समान भी नहीं देखता था।

निर्मला के पांच रत्न पैदा हुए थे, यह रत्न उस के पांचवां था, जिसका नाम उनके पुराणी बाबा "लोभीराम" के कहने से "मोती गोरी" रक्खा गया था. वाह! वाह!! "मोतीगोरी", तू "मोती गोरी" हीहै।

पाठकगण! यह मोती कोई बनावटी मोती नहीं था, किन्तु यह मोती सद्विद्या तथा सद्गुणों का भण्डार था, इसका पहरावा सादा था, यह कीमती से कीमती विद्या को ही गिनती थी, इसकी उम्र के तेरह वर्ष बीत जाने से इसने अब चौहदवें वर्ष में पदार्पण किया था, बाल्यावस्था को विदाकर किशोर अवस्था अपना प्रभाव दिखला रही थी, उसके हृदय में "निर्मला" के सब सद्गुण विद्यमान थे, "जैसी माता वैसी ही पुत्री" यह कहावत उसने कर दिखाई थी।

द्वितीय परिच्छेद

चारों ओर ग्रीष्म ऋतु अपना प्रभाव दिखला रही थी, सूर्यास्त होने पर सर्व सृष्टिको आराम देने के लिये, श्रम दुहिता, अपनी सत्ता धीरे २ बिठाती हुई दिन की गर्मी को भगाने लगी, उदर निमित्त गये हुए प्राणियों के टोळे के टोले घर की ओर आने लगे, आकाश मण्डल में तारागण पूर्णेन्दु की अनुपम प्रथा को लेकर लज्जित पने से मन्द २ प्रकाश दिखा रहे थे, पश्चिमीय शीत पवन वह रहा था, ऐसे समय "पेटलाद" शहर में विळायती फेशन के रौनकदार बँगळे में बिजली की लाइट का प्रकाश दिन की छटा दिखला रहा था, बंगले के अगले भाग में दिवानखाना था, मध्य भाग में सुन्दर श्वेत बेंच रक्खी हुई थी, जिस पर दैनिक, साप्ताहिक पत्र, तथा अनीति को आश्रय मिळे ऐसी किताबें पड़ी थी, मेज के चारों तरफ सुन्दर नक्काशीदार कुर्सियां पड़ी हुई थी, उनमें से एक कुर्सी पर एक

मनुष्य पत्थर का चश्मा चढ़ा बैठा हुआ था, और "सांज वर्तमान" अखबार पढ़ने में लगाहुआ था, पढ़ते पढ़ते जरा कुर्सी पर आड़ा हुआ, इतने में उसकी दृष्टि मेज पर पड़े हुए एक पत्र पर पड़ी पत्र को ले कवर को फाड़ पढ़ने लग गया पढ़कर उसके टुकड़े २ कर जमीन पर फेंक दिये, तुरन्त ही क्रोध में आ फिर उस अखबार के पढ़ने में लग गया।

पाठकगण! यह पुरुष कौन था? इसने जो यह पत्र पढ़ा, यह किसका था? और इसमें क्या लिखा हुआ था? यह जानने के लिये आपका अन्तःकरण अधीर हो रहा होगा यह और कोई नहीं है, परन्तु प्रथम परिच्छेद में दस बजे "पेटलाद" स्टेशन पर उतर चार घोड़ों की बग्घी में जाने वाला इस किताब का नायक "नगीनलाल" है और यह पत्र उसकी दुखित पुत्री मोती गौरी का है वह पत्र नीचे दिया जाता है।

पूज्य पिताजी!

"यह पत्र लिखते हुए मेरी लेखनी कांपती है तो भी आज मर्यादा छोड़ मुझे लिखने की आवश्यकता पड़ी है, केवल स्वार्थ के लिये ही आपने

अपने कर्त्तव्य को विदा कर दिया है, आपने मेरी चार बहिनों में से पहिली का एक हजार, दूसरी के दो हजार, तीसरी के तीन हजार, और चौथी के चार हजार इस तरह दस हजार रुपये ले उन बेचारियों को दुःख में डुबोदी है और पांचवीं जो मैं हूं, मुझे भी आप उसी गति को पहुंचाने के लिये पांच हजार रुपये ले अपने पापिष्ट पेट को भरना चाहते हैं।

मुझे विदित हुआ हैं कि जिसके साथ आपने मेरा विवाह करना बिचारा है वह "मदनलाल सेठ" बुड्ढा और क्षय रोग से पीड़ित है मुंह में एक भी दांत दिखाई नहीं देता, केवल एक मौत की ही राह देख रहा हैं, तो पिताजी अब बस करो! गाय के गले छुरी मत फेरो! कहा भी है किः—

"निर्बल को न सताइये, जाकी मोटी हाय।
मुई खाल की श्वांस से, लोह भस्म हो जाय"॥

उपरोक्त वाक्यों का स्मरण कर विचारी निदोष बालिका को मत सताओ! "पुत्री और गाय जहां भेजो वहां ही जाती है" इस कहावत के

अनुसार मैं आपके आधीन हूं, गाय से भी गरीब हूं, पिताजी गरीब की गर्दन पर छुरी मत फेरो, और मेरा जीवन मत बिगाड़ो! पिता पुत्री पर क्या कुदृष्टि करता है? क्या खेत बीज को ही खा जाता है? नहीं! नहीं!! कभी नहीं!!! तब तो फिर आप बिलकुल ही उलटा करने पर क्यों उतारू हुए हैं?

पिता जी पुत्री का पैसा जल का झाग है, बिजली का बेग है, बादल का रंग है, तात्पर्य यह है कि पैसा आ या नहीं आ "दूध का दूध में और पानी का पानी में ही रह जायगा" पिताजी सत्य की ही बरकत है खोटे की नहीं!

घर के तमाम मनुष्य आलसी बने यह घरका नाश होने ही के लिये, आपसे व्यय ज्यादा हो तो दिवाला निकालने ही के लिये इसलिये आपकी यह मलिन मति आपका नाश करने ही के लिये उत्पन्न हुई है, और अब ये सब वैभव थोड़े ही दिनों के ही पाहुने समझने चाहिये, कारण कि बिना मिहनत के दूसरे का पैसा नहीं आ सक्ता।

मैं अब आपको पिता कहूं या बैरी सांप कहूं?

क्या मैं सीता हरने वाला दुष्ट रावण कहूं ? क्या मैं आपको पिता कहूं या चमार चांडाल की जात का कहूं, मैं आपको दादा कहूं या पक्का दुश्मन कहूं ?

चाहे आप रुपये लो, इसकी मुझे दरकार नहीं है, किन्तु इन पांच हजार के लिये 'मदनपाल' सेठ अपना घरबार, आभूषण, वासन इत्यादि बेच एक भिखारी हालत में आ जायगा तभी पूरा होगा, तो फिर आपकी पुत्री वहां क्या खायगी ? 'खाने को खाक और बदन में आग' सिवाय इसके क्या रहेगा ? तव आपकी पुत्री आपको क्या श्राप देगी ? क्या आपने इस विषय का यत्किञ्चित विचार भी किया है ? इस तरह लक्ष्मी के लोभ में अंधे क्यों बनते हो, लक्ष्मी तो आज है कल नहीं, आप क्या यह नहीं जानते कि धन, आयुष्य और योवन यह विजली के समान चपल हैं ?

जो आपको स्वार्थ ही साधना था तो फिर मुझे जन्मते ही विष क्यों नहीं दे दिया ? पालन पोषन कर वडी क्यों की ? वडी की तो खैर, परन्तु पढा लिखाकर समझवान् क्यों की ? इसलिये पिता जी

इस रंक पुत्री का कहा मानों ! मैं मस्तक नमाकर कहती हूं कि मानों ! पिताजी जरा मानों !! गरीब गाय का कहना मानों !!! जरा तो दया लाओ ! आपके दुष्ट विचारों को जरा शिक्षा दो !! हाय ! पिता जी लाचार हूं ! पुत्री पर किञ्चित क्रोध मत करना।" लि० मैं आपकी आभारी !

दुखित !! दीन पुत्री !!!

"मोतीगौरी" का सविनय नमन.

"नगीनलाल" समाचार पत्र पढ़ने के पश्चात् सिगरेट सुलगा आराम कुर्सी पर आराम लेने के लिये आड़ा पड़ा, हमेशा अनुसार अधिक समय हो जाने से निद्रा देवी के अनुचर एक के ऊपर एक आकर..................सताने लगे इससे उनके हुकम को आदर दे "नगीनलाल कपड़े उतार खूंटी पर रख, एक धुला हुआ पञ्जवा पहिन सिगरेट पी सुख शय्या पर सो गया" तत्पश्चात् "मोतीगौरी" के पत्र का विचार करता हुआ निद्रा देवी के आधीन होगया।

पुराणी बाबा का पराक्रम।

घर के मालिक जग जाने पर चोर जैसे पोबारा कर जाते हैं वैसे ही सूर्योदय का समय हो जाने से तारागण एक के बाद एक अदृश्य होने लगे, मुरगे ने अपनी ध्वनि से जन समूह को अरुणोदय की चेतावनी दी. पक्षी भी अपने २ घोंसले से निकल उदर पूर्ति के लिए बाहर गए कर्णेन्द्रिय को प्रियलगें; ऐसे मधुर बचन तोता मैना के बोलते हुए कर्णगोचर होने लगे; घंटियों के टन २ शब्द सुनाने लगे; कौवे "कांव; कांव" की ध्वनि से कोलाहल मचाने लगे; चिड़ियाँ चूं २ करने लगी; चारों ओर प्रभातियों का गान शुरु होने लगा गवैया भिन्न २ बाजों से अनेक तरह के गायन गाने लगे; पर स्त्री के पास पड़े हुए कामी पुरुष निस्तेज बदन नङ्गे पांव चोरों के मुताबिक छिपते २ घर की ओर गमन करने लगे।

पाठशाला के विद्यार्थी प्रार्थना करने लगे; मुनिगण ध्यानस्थ होने लगे; देव मन्दिरों में घण्टे के शब्द कर्णगोचर होने लगे; पतिव्रता स्त्रियाँ स्वामी की सेवा से निवृत हो; घर का काम करने लगी; बदमाश स्त्रियां पति को धिक्कारने लगी, ज्योति २ में पूर्व दिशा के सुवर्ण मय कपाट खुलने लगे, और सूर्य्य का प्रकाश धीरे २ बढ़ने लगा, दर्शन होते ही प्राणी मात्र आनन्द में मग्न होने लगे सब कोई शैय्या से उठ, शौच स्नानादि क्रिया से निवृति हो, अपने २ कार्यों में लगने लगे "नगीन-लाल" सेठ भी सुख शय्या से आलस्य मरोड़ उठ और शौच जा आए इससे एक नौकर ने पांव धोने को जल की झारी, दांत साफ करने को दांत भंजन तथा विलायती बुरुश और एक टुवाल लाकर हाजिर किया; दांत साफ कर झारी के जल से मुख प्रक्षालन कर, टुवाल से मुँह पोंछ दिवान खाने में एक आराम कुर्सी पर जाकर बैठगए; तुरन्त ही चाय, बिस्कुट और नास्ता आ हाजिर हुआ. चा, बिस्कुट उड़ा लिया; इतने ही में एक फैशनेबिल बाक्स से सिग्रेट निकाल जलाई उसे पीते २ किसी की राह

देख रहे हों ऐसा दृष्टि गोचर होने लगा, इतने ही में "लोभीराम" पुराणी आया।

नगीनलाल ने कहाः- "आओ पुराणी बाबा विराजो क्यों क्या कर आए; सिंह कि शिकार ?

पुराणी बाबा—बन्दा जहां जाय वहां से निराश कभी नहीं लौटता।

नगीनलालः- किस तरह बेड़ा पार कर आए यह तो कहो" ऐसा मुँह बना कर कहा-

पुराणी बाबाः- "इसमें क्या कहना है आपने चार हजार कहे थे और बन्दा पांच हजार ठहरा आया है क्यों खुशी है कि नहीं ? इस तरह बका"

नगीनलाल-"शाबाश ! शाबाश !! पुराणी बाबा शाबाश !!! एक बार नहीं हजार बार खुशी; परन्तु ऐसी आपने क्या युक्ति की कि जिससे वह एक हजार अधिक देने लगा।"

लोभीराम-"युक्ति तो मेरी यही थी कि "मोती-गौरी" को लायक उम्रकी बताकर उसकी विद्या तथा गुणों की प्रशंसा की जिससे "मदनलाल" सेठ भी बहुत खुश हुआ, और एक हजार रुपया ज्यादा देना कबूल किया।

नगीनलाल:- बीच में अटक २ के क्यों बोलते हो ? इसका क्या कारण ?

लोभी:-कारण कुछ भी नहीं; क्या आपसे कुछ छिपा रक्खा है ? बन्दे ने भी पांच सौ रुपए ले जेब तर किया है, मेरे नामसे आप क्या अनजान हो।

"लोभी...... ...राम" तो मेरा नामही है, और मुझे अपने नामानुसार कार्य करना ही चाहिए।

नगीनलाल:- पुराणी बाबा आप बोलते हुए फिर भी क्यों अटके ? वाह रे ! वाह !! पुराणी बाबा आपने खूब हाथ मारा किंतु बोलते हुए क्यों अटके ?

लोभी:- (हाथ मार कर) "सेठजी मैंने आपका कोई नुकसान नहीं किया; फायदा करके ही मैंने अपना पेट भरा है, बीच में बोलता हुआ इसलिए अटका कि " मदनपाल सेठ " जिसने कि पांच हजार आपको तथा पांच सौ मुझे देने को कहा है वे सब रुपयों के पश्चात् घर में चारों कोने सफाचट हो जांयगे। पीछे दोष मत देना " ऐसा कह पुराणी बाबा चुप होगए।

नगीनलाल:-"कुछ कहा हो तो क्षमा करना, मैं

आपको नुकसान करने की कब कहता? यह मेरा शुभ भाग्य ही है कि आप जैसे गुणवान् गुरु मिल गए; सम्बन्धी के घर में सफाचट होजाय, तो अपने को क्या परवाह ! अपने को तो पांच हजार पहिले देदे चाहे फिर कौड़ी २ के वास्ते भीख मांगता फिरे। चाहें वह भूंखा ही मरे अपन कब उससे जबरन करते हैं वह खुशी होकर देगा तबही लेंगे इसमें अपना क्या दोष है अच्छा तो लेने का क्या इन्तजाम किया।

लोभीः-" बन्दोबस्त ! बन्दा भी किसी बात में कच्चा होगा? रुपए इस जेब में ! यह लो रुपए और पीछे बात समझे, मेरे सेठ! लो यह पांच हजार के पांचों नोट तपास लो ! और लग्न भी संवत् १९६४ के वैशाख सुदी १५ मङ्गलवार के दिन निश्चित हुआ है। अब आप सब सामग्री से तय्यार रहना कारण कि आज ग्यारस तो हो ही चुकी है, केवल तीन ही दिन बीच में हैं अच्छा अब मुझे ज्ञात हुआ क्योंकि मुझे आए बहुत समय हुआ है, ऐसा कह घर की ओर चल दिया; रास्ते में विचार करने लगा कि इस कार्य्य में तो पाँचसौ मिलही चुके हैं और

भी लग्न क्रिया में मिलेहीगा, सो तो ऊपर छोड़ा समझना ही चाहिये, इसके बाद वर वधू का कुछ भी हो इसका अपने को क्या ? क्या स्नान सूतक तो लगता ही नहीं है ! चाहे वह चवरी में ही क्यों न रँडाय–यजमान तो ऐसे ही होना चाहिये, आज तक इनकी ओरसे तीन हजार की थैली तो आचुकी है कि जिससे दूसरा धन्धा करने की जरूरत नहीं पड़ती है इसलिये मैं तो अन्तःकरण से यही इच्छा करता हूं कि "निर्मला के कन्यारत्नही कन्यारत्न पैदा हों" इत्यादि कई एक विचारों की तरंगों में गोता खाता हुआ पुराणी बाबा घरपर आया !

चौथा परिच्छेद ।

वाचक ! अपनी "मोतीगोरी,, का भाग्य फूटा !। पापीष्ट पिता और दुष्ट पुराणी ने अपनी हटकी ! विचारी निर्दोष बालिका को वयोवृद्ध "मदनपाल सेठ" को देना विचारा ! सो भी सेठ को भिखारी हालत में लाके, अपन क्या कर सकते हैं ? सिर्फ पश्चाताप कर सकते हैं, पापीष्ट पिता के हृदय पर पुत्री के पत्र का कुछ भी असर नहीं हुआ, इसलिये मैं कहता हूं कि ऐसे पापीष्ट पिता तथा लोभी पुराणी के मुंह पर पाठकगण फिर २ से थूको और विचारी "मोतीगोरी" के भविष्य के दुःख में हिस्सा लो, इस जगह शुद्ध अन्तःकरण से एक दो आँसू डालो, धिक्कार है ऐसे पुत्री के पैसे पर तागड़धिन्ना करने वाले पापी पिता को ! धिक्कार है ऐसे पुत्री का पैसा ले फक्कड़ हो फिरने वाले ! को ।

पाठकगण ! इनकी यह मौज शोक कितने दिन की ? "सत्य की जय और पाप का क्षय" क्या यह सुन्दर कहावत उन्हें याद नहीं आती ? जो जैसा कर्म करेगा, वह अवश्यही वैसा फल पायगा । अस्तुः—

उपरोक्त "नगीनलाल" और "पुराणी बावा" के बीच में जो जो बातें होरही थीं उन बातों को निर्मला और मोतीगोरी पास के ही कमरे में बैठी २ सुन रही थी । बातें सुनकर मोतीगोरी का मोती सूखगया और निर्मला का तेज उड़गया । किन्तु धीरज धर माता और पुत्री कुछ कहने के लिये दिवानखाने में गईं, तत्पश्चात् मोतीगोरी नगीनलाल के पैरों में मस्तक झुका, एकाग्र दृष्टि से गिड़गिड़ाती हुई प्रार्थना करने लगी, "पिताजी ऐसे निष्ठुर हृदय के क्यों बनते हो" जरातो दया करो !

लावो लावो पिताजी दया.......अरे
बृद्ध वरथी को म्हारो सगाई करो
प्रेम होय खरो तो न पुत्री धरो
दुःखमां..............अरे..........बावो टेक"

साखी

तनिया वरसे तेरनी वोते २ वयनो कंथ

श्वेत ध्वजा फरके शिरे, दिशेन आनन दन्ते,

स्वार्थ साधो तमारो शीमारो गती,

थशे वाला पिताजी विचारो मतीं

दीन पत्री मुखशूं उचारे अतीं

प्यार पूरो न थी हाजरा......यरे...लावो ॥ १

साखी

ज्या दोरे त्यां जायछो दीकरीने घली गाय

दया न तेनी दिल धरो ए केवो अन्याय

स्वार्थ साधी पिताजी काहे यह सो

भूली पिता न पुत्री ना शत्रु दीशो

परा बुरामा पेथी शूं बचीजशो

माना दुखिथशो तजीम्या......यरे...लावो ॥ २

पिताजी! पुत्री को गड्ढे में मत फेंको! पैसे से पेट मत भरो! पाप से पीछे हटो! क्रोध का छोड़ो! न्याय को धारो! यही मेरी अन्तःकरण की इच्छा है नहीं तो, पिताजी! सत्य के चुकने वाले, हिंसा के करने वाले, मद के पीने वाले, जूआ खे-

लेने वाले इत्यादि जिस तरह नाश हो जाते हैं, उसी तरह आपभी क्यों न नाश को प्राप्त होगे? और अन्त में दीन पुत्री के श्राप से अवश्यही दुःखी होगे—

"दुःखी! बैठ बैठ, देखो तेरी बुद्धिमत्ता, छोटे मुंह बड़ी बात करते। लेशमात्र भी शर्म नहीं आती? मुझे जितने वर्ष हुए हैं उतने तुझे अभी दिन भी नहीं हुए हैं तो भी तू मुझे शिक्षा देने आई है क्यों? पत्र में क्या लिखा था, जिसका तुझे ख़्याल भी है, क्या मैं जहरी साँप, मैं राक्षस, मैं दुश्मन, मैं चमार और चाण्डाल। क्या यही तेरा पढ़ाना सार्थक है? मनुष्य कहते हैं कि लड़की को नहीं पढ़ाना यह बिलकुल सत्य है।

आज मुझे इस बात का उदाहरण प्रत्यक्ष नजर आरहा है पर क्या करूं? तू मेरी पुत्री है नहीं तो मैं तुझे इतनी देर तक देख नहीं सकता था, बस अब तू एकदम यहाँसे चलीजा मैं तेरा मुंह देखना नहीं चाहता बस मैंनें जो किया वह निश्चय ही समझ! अब मैं अपने विचारों से कभी भी डिग नहीं सकता।

वायु के प्रचण्ड वेग से जिस तरह पके हुए पत्ते पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं उसी तरह पिता के क्रोधयुक्त वचन सुन तथा उसका मदनपाल सेठ के साथ विवाह करने का दृढ़ विश्वास जान मोती-गौरी हा............य नसीब ऐसा दीर्घ निश्वास डाल ललाट पर हाथ रख मूर्छित हो जमीन पर गिर पड़ी, तथा तुरन्त पास खड़ी निर्मला ने उसे झेलली, और अपनी गोद में ले आश्वासन देती हुई गद्गद् कण्ठ से प्राणनाथ प्रति दीन वचन कहने लगीः—प्राणनाथ! "आप यह क्या करने बैठे हो, गाय के गले छुरी! मेरी चार पुत्रियों का तो आपने नाश करही दिया है, परन्तु इस पाँचवीं पर तो दया लाओ! जरा तो विचारो!! पुत्री के पैसे से पेट भरना इससे तो मरना हजार दर्जे अच्छा है!!! संसार में इससे ज्यादा अपकीर्त्ति क्या है? धर्मशास्त्र भी प्रतिपादन करते हैं कि पुत्री के घर का पानी अग्राह्य है पुत्री का पैसा लेने की बात तो दूर रही! इसलिये प्राणेश! इस दीन दासी के बचन मानो, मानोगे तो अच्छा ही है।

माता पिता का धर्म है कि पुत्र पुत्री का संर-

क्षमा करना, विचारो तो सही कि कोई आपके कुटुम्ब को तकलीफ़ देतो, आप तुरन्त ही उसपर दावा करने तय्यार होजाते हैं, परन्तु आपतो स्वयं ही अपनी सन्तान को अपने ही हाथ से डुबो रहे हो, मतलब यह है कि बृद्ध से विवाह कर, पुत्री को दुःखरूपी दरियाव में डुबोना, यह कितना बड़ा भारी पाप कर्म है! कितनी भारी नीचता है!! कितनी भारी कठोरता! कितना भारी घातकी तथा कसाईपन!! इसलिये प्यारे! जरा विचारो, क्रोध को मारो, दया को धारो, नीति को निहारो, पुत्री को पालो, दुःख में मत डालो, यही आपका धर्म है। क्या आप नहीं जानते कि महत्पुरुष का वचन, सती का श्राप, और निराधार का निश्वास कभी भी पीछे नहीं हट सकते, इसने जो पत्र लिखा था वह मेरी सम्मति से ही लिखा था, इसमें इसका क्या दोष? इसलिये प्राणनाथ! पुत्री पर क्रोध न कर इस दीन दासी का कहना मानो! मानो स्वामी-नाथ मानो! अभी समय है नहीं तो पीछे बुरी तरह से पछताओगे। हा........थ मैं लाचार हूं,,!

नगीनलाल-पछताऊंगा!! ठीक तेरी विद्वता

अपनेही पास रख, लुच्ची ! मुझे कुछ सलाह नही चाहिये तुझे कौन पूछता है, कि जो तू इतनी लम्बी चौड़ी मुंह जोरी कररही है, कहा है कि:—"स्त्री की मति तुच्छ होती है" यह बात बिलकुल सत्य है ठंण्डा खाना झूंठ बोलना उसीमें की तू है न ? दूसरी तेरी क्या बुद्धि, तुझे इस विषय की क्या मालूम ? सचमुच इस संसार में स्त्री का दर्वेल विना पूंछ का बैलही है, मैं तो अपने दिल का विचारा ही करूंगा मैं अपने दृढ़ निश्चय से कभी नहीं डिग सकता समझो ! चाहे पुत्री का निश्वास मुझे क्यों न लगे, परन्तु खबरदार जो तूने इस विषय की बात की तो ! कमजात ! मेरे पाससे हट जा ! ऐसाकह क्रोध से वेष्टित अपने नायक नगीनलाल ने बिचारी निर्दोष निर्मला के दो चार लातें मारदी, कि जिससे तुरन्त ही निर्मला बोले विना मोतीगौरी को ले नीचे उतर गई, निर्दोष बालिका भी रोती हुई माता के गले लिपट गई, तब दोनोंही रोने लगी, प्रिय पाठकगण ! आजसे ही अपनी धर्म की बहिन मोतीगोरी का सुखरूपी सूर्य्य सदा के लिये अस्त होगया।

पाँचवां परिच्छेद.

(दुःख के बादल)

वैशाख शुक्ल पूर्णिमा के शुभ लग्न का दिन आ पहुंचा, गाँव परगाँव से नगीनलाल सेठ के सम्बन्धी आने लगे, अभी सेठ के बँगले में भी कुछ सुन्दरता में फेरफार होगया है, दिवाल पर भिन्न २ रंगों से सुशोभित आशक, माशूक तथा देवी देवताओं के साथ २ वीर पुरुषों के अनेक चित्र उत्तमोत्तम पेन्टरों की उमदा कारीगरी का भान कराते थे।

इकट्ठे हुए वृद्ध, बाल और यौवन स्त्री पुरुष कोलाहल कर रहे थे साथ २ में भिन्न २ बाजों की ध्वनि भी कान फाड़ डालती थी, फिटिशन लाईट ने अपना प्रकाश मण्डप में चारों ओर फैला रक्खा था, नीला, लाल, पीला इत्यादि भिन्न २ रंगों से विभूषित ग्लासों की रोशनी, हाँडी झूमर के साथ

साथ रँग विरंग के कागज़ों से सुशोभित मण्डप मन को अनहद आनन्द पहुंचाता था।

मण्डप के द्वार पर टाइप को भी टक्कर मारने वाला "वेलकम„ (WELLCOME) के सुन्दर सुनहरी अक्षर फिटशन लाइट के प्रकाश में सुशोभित थे।

नगीनलाल और उसके मित्र मेहमानों के आगत स्वागत में लगे हुए थे, निर्मला गृहकार्य्य में लग रही थी, एक तरफ स्त्रियाँ आधुनिक समय में गानेवाले निर्लज्ज गीतों की गर्जना कर रही थीं, तरुण और बालक अपनी २ जगह में इकट्ठे हो गप्प-सप्प में लगरहे थे, तात्पर्य यह कि सर्वत्र आनन्द फैल रहा था, ऐसे समय में बंगले के पिछले भाग की बारी में एक तरुण बालिका म्लान मुख, अपने गुलाबी गालों पर, दाहिने हाथ की तर्जनी टिका भूतल पर दृष्टि कर बैठी थी उसका सौन्दर्य-मय चेहरा निस्तेज दिखाई देता था, वदनाम्बुज पर सर्वत्र निराशा ही निराशा छारही थी, आजके मङ्गलोत्सव को देख इस बालिका के हृदय पट पर कोई विपरीत ही असर किया हो ऐसा उसकी मुख

मुद्रा परसे ज्ञात होता था, तरुण बालिका उठकर तिपाई पर से किताब ले पढ़ने लगी एक के बाद एक इस तरह सब पृष्ट फेर डाले, परन्तु एकभी अक्षर नहीं पढ़ा, पुस्तक वापिस टेबिल पर रक्खी, और पलङ्ग पर बैठ धीरे २ रोने लगी। इतने में ही दाद्दरे पर से किसी के आने की आहट मालूम पड़ी इतने में ही "क्यों मोतीगोरी बहिन" कहते हुए एक तरुणी बाला ने भीतर प्रवेश किया "अच्छा आओ रत्नगौरी बहिन" ऐसा कह मोतीगौरी उठ खड़ी हुई, नवीन युवति को बैठने के लिये आसन दिया, बाद दोनों बात चीत में गुँथ गई।

मदनपाल सेठ की बारात धूमधाम से आ पहुंची, सेठ ने वृद्धावस्था छिपाने के लिये ऊपर से कई एक टीमटाम कर, पूर्णतया यौवन अवस्था दिखाने में कुछ भी कसर नहीं रक्खी, श्वेतबालों को काले करने के लिये "जशमाइन" का दुर्गन्धयुक्त खिजाब का भी उपयोग किया था, "पाउडर" से मुँह को खूबसूरत बनाने का मिथ्या प्रयोग भी किया था, पैर में पुराना जूता नहीं वरन नई फेशन का विलायती चकमकाहटदार बूट पहिने हुए था,

अभी मदनपाल सेठ का ठाठ नाटक का नहीं लेकिन भाँड़ जैसा था, वरराज की तरफ़ का सामेरा आया, बरात योग्य स्थान में उतारी गई, पश्चात् ज्ञाति के कितनेही रिवाज पूर्ण हुए, बाद सेठ खों खों करते मायरे(चंवरी)मेंपधारे। लोभीराम आदि विप्रमण्डली ने समयानुसार एक पर एक श्लोकों की ध्वनि से मण्डप को गुँजा दिया, समय होने से मोतीगौरी भी मायरे(चंवरी)में लाईगई, एकसे दूसरेका हाथ मिलाया गया। चतुर्थ मङ्गल समाप्त होतेही वर कन्या परणकर उठगई शुभ लग्न निर्विघ्न समाप्त होते ही नगीनलाल मित्र मण्डली सहित बहुत आनन्दित हुआ, दूसरी ओर सुधारक मण्डली मोतीगौरी के प्रति दया प्रकट कर कन्या विक्रय से होते हुए अन्याय को देखकर नगीनलाल के प्रति घृणा प्रकट करते हुए धिक्कारने लगे, विप्र मण्डली को योग्य दक्षिणा दीगई अन्त में बरात के साथ २ मोतीगौरी की भी बिदा की गई।

मोतीगौरी ने अपने घर में नहीं २ भाडे के घर में प्रवेश किया, और कन्यापद को छोड़ गृहणी का दुःखद भार शिर पर लिया, घर में जाकर देखती

है तो चारों कोने सफाचट् होगये हैं कारण कि मूर्ख मदनपाल सेठ ने सब चीजें बेच वधू की थी, मोतीगौरी विचारी मुर्झाने लगी, और निश्वास छोड़कर पिता को अनेक तरह के श्राप देने लगी, "मरो मेरे पिता जिन्होंने मुझे इस पाप में डाला। अपना पापीष्ट पेट भरने के लालच से मुझे इस दुःख रूपी दरियाव में डुबो दिया। पहिनने ओढ़ने को तो कोसों दूर रहा, किन्तु खाने को भी नदारत! चाहे स्त्री को खाने पीने को न मिले, पहिनने ओ-ढ़ने को न मिले, नंगे पाँव जङ्गलों में भटकना पड़े, सर्दी या गर्मी सहनी पड़े इत्यादि कई तरह के दुःखरूपी बादल चाहे स्त्री पर झुके रहें, किन्तु एक प्राणनाथ के तरफ़ का ही सुख हो तो बस है, परन्तु मेरे भाग्य में यह भी नहीं है, प्रसङ्ग आने पर प्राणनाथ की तरफ़ से भी हाथ धोने पड़ेंगे, नाथ! सुख का दरवाजा बिलकुल बन्द होगया है, बाद में अपनी यौवनावस्था कैसे बिताऊंगी, पापी-पिता! तेरा सत्यानाश जाय, तुझे भिक्षा माँगने पर एक दाना न मिले, और आखिर नर्क में ही जाय। यही मुझ दुःखिनी का श्राप है।"

पाठकगण ! आपको भी मोतीगौरी के दुःख में हिस्सा ले, इकट्ठा हो, कहना चाहिये कि 'तथास्तु'

मदनपाल सेठ वृद्धावस्था तथा दम और क्षय रोग से पीड़ित हो कुछभी कार्य्य नहीं कर सकता था, वह तो सिर्फ पलङ्ग का ही सेवन करता था। परन्तु मोतीगौरी जिसने कि अपनी माता निर्मला से भरत का काम, गूंथने का काम, सीने का काम इत्यादि कई एक काम सीखी हुई थी जिससे वह आपत्तिकाल में सीना पिरोना कर अपना तथा अपने पति का पेट भरती थी।

दिन प्रति दिन मदनपाल ज्यादे बीमार होने लगा, और यहाँतक बीमार होगया, कि अन्त में बोली भी बन्द होगई।

उसके सगे सम्बन्धी तथा मित्रवर्ग को खबर होजाने से सब देखने आने लगे, नेटीव डाक्टर भी बुलाया गया डाक्टर ने आकर नाड़ी देखी और दवादे फील ले रवाना हुए।

डाक्टर के नाड़ी देखने से सबको विश्वास होगया, कि अब मदनपाल नहीं बचेगा, परन्तु बिचारी मोतीगौरी का पीछे से क्या हाल होग

इसी बात पर सब तरस खा रहे थे कि इतने में एक, दो और तीन हिचकियाँ आईं और तब मदनपाल सेठने अपनी आँखें फेर लीं हमेशा के लिये उसका प्यारा प्राण इस देहको छोड़ परलोक प्रयाण कर गया।

फिर क्या था मोतीगौरी सिर और छाती कूटने लगी, तब सब मण्डली ने उसे समझाकर ऐसा करने से रोका, अब मदनपाल सेठ के शव को श्मशान भूमि तक पहुंचाने को पैसे न होने से एक दूसरे का मुंह ताकने लगे, इतनेही में एक उदार गृहस्थ ने सब खर्चा देना मंजूर किया, तब सब सामग्री ला शव को श्मशान में लेजाकर फूंक दिया।

पाठकगण! देखा मदनपाल सेठ ने व्यो वृद्ध अवस्था में सब चीजें बेच काम के वशीभूत हो विवाह किया, तो अन्त में कफ़न तक नहीं मिला। सेठ तो गये सो गये ही लेकिन विचारी मोतीगौरी का भविष्य भी बिगाड़ उसे दुःख के कुए में डाल गये, और खुद इस संसार में तिरस्कृत हुए। यदि सेठ इन्हीं रुपयों को बटोहियों के लिये धर्म-

शालाओं में अथवा दुःखित मनुष्यों के लिये औष-धालय में, अनाथ विद्यार्थियों को शिक्षा देने में, अन्धे, लूले, लँगड़ों के वास्ते अनाथालयों आदि किसी भी परमार्थ कार्य्य में ख़र्च करते तो उनका नाम इस संसार में स्थाई होजाता और अन्त में शुभ गति वांधता। परन्तु लक्ष्मी का सदुपयोग क-रना बहुत कठिन है।

यौवनावस्था वीत जाने पर भी काम के वश में हो मदनपाल के समान दूसरे की पुत्री से विवाह कर दुःखित अवस्था में छोड़जाने वाले को वारम्वार धिक्कार है, इसीलिये वाचकवृन्द! मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप कभी ऐसा निन्दित-कार्य्य न करें नहीं तो अन्त में आपकी भी ऐसी ही दशा होगी।

वाद सब स्नान कर ओ......ओह......ओ...ओह की मिथ्या ध्वनि कर मदनपाल के चोक में आ बैठे, जाति रिवाजानुसार कार्य्य कर एक के वाद एक जाने लगे, दूसरी ओर स्त्री समाज भी रोनें पीठंने के दुष्ट रिवाज को छोड़ एक के वाद एक जाने लगी।

विचारी मोतीगौरी वैधव्य दशा को प्राप्त हुई, जाति रिवाजानुसार सगे सम्बन्धी दस दिन तक उसके घर सोने आये, आज वह निराधार अबला अकेली पड़ी २ रोरही थी, मोतीगौरी रो २ कर थक गई और अन्त में, खिला हुआ खिरेहीगा, फूला हुआ मुरझावेहीगा, उदयहुआ अस्त होवेहीगा, चढ़ा हुआ गिरेहीगा, भरा हुआ खाली होवेहीगा, जला हुआ बुझेहीगा, जन्मा वह मरेहीगा, विवाहित राँड होवेहीगा, इस तरह के विचारों से दिलासा दे पति की मूर्त्ति को दिलमें रख, दृढ़ता के साथ शीलता का शृङ्गार बना, सतसंगति का स्वाद लेने के लिये, वैराग्य की छटा हृदय पट पर ला, दीन वचन बोलती हुई, दुःख में समय बिताने लगी।

छट्टवां परिच्छेद.

कुटिला का कपटजाल

ग्रीष्म ऋतु का समय है मध्यान्हकाल छारहा है, चारों ओर उष्णता व्याप रही है, ऐसी कड़कड़ाती धूप में कितने ही श्रीमन्त तथा सेठ साहूकारों की स्त्रियाँ अथवा कन्यायें, कण्डे लेने के लिये गाँव के वाहिर जंगल में भटकती फिरती हैं, यदि उन लड़कियों को कोई शिक्षार्थ पाठशाला में भेजने को कहे तो तुरन्त ही अक्ल के अन्धे, मूर्खों के शिरोमणि, अपने मुँह से ऐसा आक्षेप करते हैं कि लड़कियों को पढ़ाने से वे दूषित आचरण वाली होजाती हैं, उनका चाल चलन बिगड़ जाता है, तो उनको प्रत्युत्तर दिया जाता है, कि आपकी प्यारी पुत्रियाँ जंगल में कंडा व लकड़ियाँ इकट्ठी करने के लिये यहाँ वहाँ भिखारी की हालत में भटकती हुई ग्वालों के मुँह से हजारों अति वीभत्स गालियाँ सुनती हुई विपरीत अवस्था में रहती हैं क्या इसीमें आप अपनी इज्जत समझते हैं ?

धिक्कार है आपको और आपकी ऐसी श्रीमन्ताई को! जो कि आप अपनी प्यारी पुत्रियों को नाचीज़ करण्डे के लिये जंगल में भेज इज्जत को धूल में मिलाते हो और पुत्रियों को पाठशाला भेजते हुए बुखार लाते हो!

कौन कहता है कि विद्या कलंकित है? माता पिता का कर्त्तव्य है कि पुत्रियों की रक्षा करना, हमेशा अच्छी संगति में रखना, ज्यादा लाड़ नहीं करना, कभी स्वतन्त्रता नहीं देना, हमेशा दबाव में रखना, बिना कार्य्य घर के बाहर नहीं जाने देना, एकान्त स्थान का सेवन नहीं करने देना, अकेली कहीं भी नहीं जाने देना, किसीभी पुरुष के साथ प्रसंग नहीं पड़ने देना इत्यादि आप क्या अपना कर्त्तव्य पालन करते हो?

नहीं २ इनमें से आप कुछभी नहीं करते, क्योंकि आपकी वेपरवाही है आपतो अपने लिये गाड़ी तैयार करा उसमें बैठ वायु सेवनार्थ शहर के बाहिर चले जाते हैं और विचारी गरीब गाय जैसी पुत्रियों को पशु समान स्थिति में रख भारतीदेवी को कलंकित करना चाहते हो!

किन्तु हाथ में रक्खा हथियार जान माल की रक्षा के लिये है, पेट में घुसाने को नहीं, परन्तु यदि उसे स्वयं ही अपने पेट में घुसावे तो हथियार का क्या दोष! इसी तरह विद्या यह संसार में संरक्षण करनेवाला उम्दा खड्ग है, परन्तु उसका सदुपयोग नहीं करते, उसे उलटी ही राह पर व्यय करे तो उसमें विद्या का क्या दोष! जरा तो विचार करो। भृतहरी कहते हैं कि:—

शार्दूल विक्रीड़ितं

"विद्या नाम नरस्य रूप माधिकं प्रछन्न गुप्तं धनं।
विद्या भोगकरियशः सुखकरी विद्या गुरूणां गुरू॥
विद्या वन्धु जनो विदेश गमने विद्या परं देवतं।
विद्या राजसु पूजिता नतु धनं विद्या विहीनं पशुः"॥

अर्थात्—"विद्याही मनुष्य का बड़ा भारी रूप है, यही एक गुप्त धन है, इसीसे भोग कीर्त्ति और आनन्द भी मिलते हैं, यह गुरू का भी गुरू है, इसीसे विदेश में भाई के समान हित होता है, यही एक परम देवता है, राजा भी इसकी इज्जत करता है, लेकिन वह धन की इज्जत नहीं करता इसीसे विद्या रहित पुरुष पशु समान है"।

उपजाति वृत

"नचौरे चौर्य्यं नृप तेर साध्यं
नभ्रांत भागं नकरोति भारम्
व्ययी कृते वर्धते एव नित्यं
विद्या धनं सर्व धन प्रधानम्"

(भोज प्रवन्ध)

अर्थात्-विद्या को चोर नहीं चुरा सकता, राजा नहीं छीन सकता, भाई नहीं बाँट सकता, भार भी नहीं लगता, और व्यय करने से भी हमेशा बढ़ती ही जाती है, इसीसे विद्यारूपी धन सर्व धनों में श्रेष्ठ है।

इस संसार में विद्याहीन पुरुष तथा स्त्रियाँ बिना पूंछ के बैल समान हैं, तो फिर पुत्री को बैल के समान स्थिति में रखने वाले आपको मैं क्या उपमा दूं ?

आर्या

"अज्ञः सुख माराध्यः सुख तर माराध्यते विशेषज्ञः
ज्ञान लव दुर्विदग्धं ब्रह्म पिनरं नरं जयाति" ॥

अर्थात्-"इस संसार में अज्ञ [कुछभी नहीं जा

नने वाले] सुज्ञ [अच्छी तरह जानने वाले] अल्पज्ञ [थोड़ा जानने वाले] इस तरह तीन प्रकार के मनुष्य हैं, इसमें से अज्ञ मनुष्य सुखसे वश में हो सकता है, सुज्ञ मनुष्य बिलकुल प्रयास विना वश में हो सकता है; परन्तु अल्पज्ञ को तो कोई भी वश में नहीं कर सकता,, और भी कहा है:—

शार्दूल विक्रीड़ित:—

शक्यो वार पितुं जले न हुत भुक् छत्रेण सूर्यातियो
नागेन्द्रो निशि तांकुशेन समदो दण्डेनगो गर्दभो
व्याधि भेषज संग्रहैश्च विविधैर्मन्त्र प्रयोगो विषं
सर्व स्यौष धमास्ति शास्त्र विहितं मूर्खस्यना स्त्यौषधम्

अर्थात्–"जलसे अग्नि का निवारण हो सकता है, छत्री से धूप का निवारण हो सकता है, तीक्ष्ण अङ्कुश से मदोन्मत्त हाथी भी वश में हो सकता है, डण्डे से गाय, गधा, वशमें होसकता है, औषधि के सेवन से रोग चला जाता है, नाना प्रकार के मन्त्रों से विष का निवारण हो सकता है, इत्यादि कई एक युक्तियाँ शास्त्रों में कही हैं, परन्तु मूर्खपने की निवृत्ति का एकभी उपाय नहीं है–

(भृतहरी)।

इसलिये अंक्क को पास आनेदो ! आँखें निकाल मत डराओ । पढ़ाने से लड़कियां दुराचारणी होती हैं, ऐसी तुम्हारी खराब बुद्धि को हटादो ! कारण कि सच्ची शिक्षा पा कोई बुरे रास्ते नहीं गया है, पढ़ी हुई लड़कियों में यदि आपको दोष मालूम हुआहो तो वह पूर्णतया शिक्षित नहीं होने का ही दोष है उसको साबित करने के लिये कवि 'शेक्सपियर' कहते हैं कि Little knowledge is an dangerous thing [लिटिलनालेज इज़ एन डेंन्जरस थिंग] अर्थात् थोड़ा ज्ञान एक भयंकर वस्तु है, [अल्पज्ञान अति हानि] इसलिये उन्हें अपूर्णतया एक देश शिक्षा देने के बदले उनकी बुद्धि प्रफुल्लित हो ऐसी शारीरिक, नैत्तिक, व्यवहारिक धार्मिकादि सम्पूर्ण और सर्वांग शिक्षा देनी चाहिये।

जो कुछ भी दोष पढ़ी हुई स्त्रियों में दृष्टिगोचर होता है वह अपूर्ण शिक्षा का ही फल है इसलिये जिस अङ्ग में न्यूनता हो वह पूरी करना चाहिये, किन्तु सिर्फ विद्या को ही निन्दित करने से इच्छित लाभ प्राप्त नहीं कर सकेगा, मैं इसके साथही साथ यह पूछने की भी हिम्मत रखता हूं, कि अपढ़ स्त्रियां

दुराचारिणी नहीं होती हैं? और यदि होती हैं तो बिना विचारे ही शिक्षा को दोष क्यों देना?

शिक्षा उन्हें अपवित्र बनने का उपदेश नहीं देती, दोष सिर्फ़ पात्र का ही है, तो फिर स्त्रियों को शिक्षा नहीं देना इस बुद्धि को एकदम हटादो। और विचारी पुत्रियों को सुशिक्षा अवश्य ही दो!

पूर्वकाल में श्रीराजमति, सीता, द्रौपदी, दमयन्ती, चंदनबाला और ब्राह्मीसुन्दरी इत्यादि स्त्रियाँ पढ़ी हुईथी, तो उन्होंने नीति को कहाँ छोड़ी, नहीं! नहीं!! प्राणान्त तक नहीं छोड़ी!!! उन्होंने तो संकट सह पतिव्रत-धर्म पालन के लिये उभयकुल में उजाला कर स्वयं पति के नाम को अमर कर दिया है, और आज उन्हींका नाम सती होनेसे प्रातःकाल पाप निवारणार्थ लिया जाता है, तो फिर विद्या को दोष देते क्यों नहीं शर्माते!!!

अरे यहतो ताप से व्याकुल हो विषय किधर का किधरहो चलागया, परन्तु घबराओ मत, धीरज रक्खो, और मुझे दोष मतदो मेरा यह व्याकुल होना कितनेकको सुरास्ते पर लानेवाला है अच्छातो अब मैं पुनः अपने विषय पर चलता हूं।

ग्रीष्मऋतु की कड़ी धूपमें भी कितनीही स्त्रियाँ कंडे लेने के लिये ग्राम के बाहिर भटक रही हैं, तो कितनी ही स्त्रियाँ पति के बाहर चले जाने से दूसरे के ओटले पर बैठ, पैर पर पैर चढ़ा, गप्पें मार रही हैं. कितनीही पति तथा सास, श्वसुर के छिद्र दिखला अपनी बुद्धिमत्ता प्रगट कर रही हैं, कितनीही जेवर की तङ्गी से चिल्लाती हैं, कितनीही पुत्र नहीं होने से पुत्र के नाम रोरही हैं, तो कितनीही मर्म-भरी वातेंकर, मनमें अति मग्नहो, आमने सामने ताली दे हास्य-विनोद करती दिखाई देरहीं हैं। कितनीही पति की निर्धन अवस्था होने से पति को गालियां देरही हैं, तो कितनीही अपनी पुत्री को ही राँड, शङ्खनी, राँड़ भङ्गण, ओ कागली पे इत्ती, पे गधी, रांड छिनाल इत्यादि बुरे शब्दों द्वारा गालियां देरही हैं, कितनीही लड़के को गालियां देती हुई कहती हैं, कि जरा घर में बैठ, और बच्ची को मचकादे, कि जिससे यह राँड रोती रहजाय, मैं तो इससे थकगई हूं, इत्यादि रीति से बक रहीं थीं। दूसरी ओर निर्मला से उत्पन्न हुई मौतीगौरी अपने उदरपूर्त्ति निमित्त टोपियां बना २ कर व्यापारीवर्ग

को देने के लिये एक जगह इकट्ठी कररही थी और मुँह से सुन्दर भजन गाती जाती थी।

इतनेही में उसके पासही रहनेवाली "रत्नगौरी" नामकी एक पच्चीस वर्षीय विधवा बाई ने आ उसके घरमें प्रवेश किया, क्यों वहिन मोतीगौरी क्या कर रही हो? ऐसा उसने कहा।

प्रिय पाठकगण! इस रत्नगौरी ने अपने शील-रत्न को यत्न से नहीं रक्खा था, लेकिन मिट्टी में मिला दिया था, ऐसा आगे आप जान जायँगे।

आओ रत्नगौरी बहिन बैठो, क्या करने का है सिर्फ पेट भरने का यत्न कर रही हूं क्यों आजतो बहुत दिनों में दर्शन दिया, ऐसा कह बैठने को आ-सन दिया।

क्या करना बहिन आप फुरसत में थोड़ेही हो, जब देखती हूं तभी कार्य्य में पाई जाती हो, आपसे मिले विना तो कार्य्य चलही नहीं सकता मैंने तो आपकी बहुत दिनों तक राह देखी, परन्तु आओ ही क्यों? आपका दर्शन तो देवों से भी दुर्लभ है, इस लिये अन्त में मुझेही आना पड़ा, मैं निःकामही हूं क्यों न? ऐसा हाथ मलकाकर रत्नगौरी ने कहा!

वहिन मैं आपको निःकाम कैसे कह सकती हूं, आई तो आप मेरे सिरपर हो, बड़ी कृपा की, ग़रीब का घर पवित्र किया, लो यह पान और बना कर खाओ, ऐसा मोतीगौरी ने विनय से कहा।

पान बनाकर क्या काम है ? आपको तो खाना ही नहीं, क्योंकि आपको तो अनाज के सिवाय दूसरी वस्तु की आंखड़ी है, परंतु पान खाने में क्या हरक़त है। लो, एक पान आपके लिये भी बनाती हूं बहुत दिनों में आज तो अवश्य खानाही पड़ेगा, ऐसा कह पान बना, देने के लिये हाथ आगे किया, रत्नगौरी ने प्रपंच का जाल फैलाना शुरू किया।

वहिन इतना आग्रह मतकरो। मैं पान नहीं खाऊंगी। परंतु आपने मेरे लिये बनाया है इसलिये मैं आपकी आभारी हूं यह पान खाये ही बराबर है इसलिये आपही खाओ, ऐसा मोतीगौरी ने आदर से कहा।

ऐसा क्या होसकता है, मेरी सौगन्द खा करके भी मेरा मान नहीं रखती हो ! रखनाही पड़ेगा। और पान खाना ही पड़ेगा ! यह हाथ पीछे नहीं फिर सकता इसलिये अवश्य ही खाओ, ऐसा रत्न-

गौरी ने मान से कहा।

क्षमा करो वहिन! ऐसा दुराग्रह कर मेरा सिर वोझित मत करो, आप जैसी समझदार को क्या कहना पडे। स्त्रियाँ जो पान खाकर मुंह को लाल करती हैं, सिर में माँग पाड़ती हैं, ललाट पर हिंगलु लगाती हैं, वालों में मोती सजाती हैं, चोटी को सुगन्ध युक्त फूलों से सजाती हैं, कपाल में चन्द्र पहिनती हैं, नेत्र में अंजन आंजती है, नाशिका में काँटा नथ पहिनती हैं, दांतों को मिस्सी लगा साफ़ करती हैं, ये सब शृङ्गार किसलियें? पति का प्रेम मिलने के लिये, रसिकवर को राजी रखने के लिये, चतुर का चित्त हरने के लिये, प्यारे को प्रिय लगने के लिये, प्राणेश को काम पैदा कराने के लिये, पति को वश में करने के लिये, और आख़िरी पति से निर्मल प्रीति का पान करने ही के लिये।

तो फिर बहिन कहो कि मेरा सौभाग्य रक्षक पति का तो परलोक गमन होगया, तब फिर मैं पान कैसे खाऊं? क्या यह विधवा का धर्म है? कभी नहीं! पानतो क्या परन्तु हर तरह का शृङ्गार

करना भी मना है।

इसलिये बहिन, बिधवा स्त्रियों को तमाम नके नये वस्त्राभूषण तज देना चाहिये, अरे इतनाही नहीं परन्तु मिष्टान्नादि भोजन का त्याग कर हमेशा के लिये पृथ्वी पर शयन करना चाहिये, और केवल सफेद वस्त्र पहिन सबके कल्याणार्थ जिनेश्वर का ही ध्यान करना चाहिये, इसलिये बहिन अत्याग्रह कर मेरा दिल मत दुखाओ। मैं पान खाने वाली नहीं, यह पान आपही खाइये! इतना कहने में ही मोतीगौरी का हृदय भर आया और उसके नेत्रों से टप टप आँसू गिरने लगे।

बहिन यह क्या! आप इतना रंज क्यों करती हो!! मेरी भूल हुई मैं भी तो आपही जैसी हालत में हूं, परन्तु इस तरह दुःख में दिन कबतक बिताऊं? नहीं तो अच्छा पहिनने को, न अच्छा खाने को, न अच्छा ओढ़ने को, न कहीं जानेको, और फिर पृथ्वी पर पड़ा रहना यह कैसे सहन हो सकती है, और यदि सहन भी करलूं, तो क्या गये हुए वापिस आसकते हैं? क्या बिगड़ा हुआ फिर से सुधर सकता है? क्या होनहार भी मिथ्या हो

सकता है ? कदापि नहीं, इसलिये बहिन ! हिम्मत को मत हारो ! आपने इस संसार में क्या सुख देखा है ! मरो वह पिता ! और वह पति ! अपने को तो अब पूर्ण जवानी आई है, और संसार में स्वर्ग सुख का अनुभव भी इसी अवस्था में ही ले सकती हैं तो फिर अपने को यह विरहरूपी भीषण ज्वाला कबतक सहन करनी चाहिये।

बहिन गया यौवन पीछा नहीं आसकता, तो फिर उतरी अवस्था में अपने भाव को कौन पूछेगा, इसलिये पहिले ही अपने आप मौज लूट लेना चाहिये पति मर गया तो पाप कटा ! संसार में शौकीन पुरुषों की क्या कमी है ? एकाध पसन्द कर लिया कि बस हुआ ! खाना ! पीना !! मौज उड़ाना !!! किस लिये आँख पर पट्टी चढ़ा कर इतना दुःख सहें। योवन अवस्था तो आज है और कल नहीं ! इसलिये संसार में आ जितना सुख लूटें उतना ही अपना है। इसलिये पहले ही अपने वे सुख प्राप्ति की हालत में साधन खोज लेना चाहिये। देखो न उस "कमला" को जोकि अपने ही जैसी होते हुए भी कैसा सुख भोग रही है।

मैं भी पहले तो आप के ही अनुसार टेक ले बैठी हुई थी। परन्तु विरह की विकट वेदना सहन नहीं होने से अन्त में मुझे इस मार्ग की शरण लेनी पड़ी! जिससे कि आज अत्यन्त सुखी हूं। दुःख क्या वस्तु है? उसकी कल्पना भी मेरे दिल में नहीं आती इसलिये मेरी तो यही राय है कि आप भी यही मार्ग ग्रहण करो, और जीवन भर अखण्ड सुख की लहरों में तिरा करो, डरती किस लिये हो।

साथ ही आप के लिये तो बहुत सरलता है! कि मदनपाल सेठ ने आपके साथ जो विवाह किया था वह उनके परम मित्र रशिकलाल की सम्मति से हो किया था। पैसा भी उसी ने दिया था। यह घर भी उसी के यहाँ वेचाण है इसी लिये यदि रसिकलाल आपके यहाँ रोज भी आय तो भी किसी को शंका नहीं आने की। वय में भी आपसे दो, तीन वर्ष बड़े हैं। रूप की तो खान ही हैं और शौकीन भी पूरे हैं लक्ष्मी देवी भी उनसे प्रसन्न हैं जो तुम उनसे प्रीति रक्खो तो संसार में आपसा भाग्यशाली कौन हो सकता है? जैसे दूसरा कामदेव और रति का ही जोड़ा हो!

पाठकगण ! देखा इस मदनपाल का परमप्रिय मित्र ! दिलोजानदोस्त !! संकट का साथी !!! आधुनिक समय में ऐसा मित्र नहीं किन्तु मित्र के। कलंकित करने वाला नीच पुरुष था, इसलिये मेरी आपसे प्रार्थना है:—कि मुहं से मीठे बोलने वाले, कुबुद्धिधारी, कामान्ध, मित्रों से सदा सावधान रहना चाहिये। और ऐसे बदमाशों से कभी स्नेह नहीं रखना चाहिये।

पाठकगण ऐसे द्रोही मित्रों को इस संसार में सहस्त्र बार धिक्कार है। "बहिन मोतीगौरी आपके दिल को तो मैं क्या जानूं, परन्तु यदि आप मेरा कहना मानोगी तो हमेशा के लिये सुखी हो जाओगी! रत्नगौरी ने धीरे २ मोह जाल डालना शुरू किया।"

"बस कमजात! अब अपनी जीभ बंद कर!! तेरी इस पापिष्ट बुद्धि को प्रगट न करते हुए अपने हृदय में ही रहने दे "रशिकलाल" चाहे रूपवान हो या कोयले जैसा काला हो, श्रीमंत हो या कंगाल हो, यौवन हो या वृद्ध हो, शौकीन हो या शठ हो, चाहे जैसा हो, मुझे उससे क्या प्रयोजन?

उस दुष्ट की मुझे क्या जरूरत है ? अनीति की उत्ते-जना करने वाली इस तेरी शिक्षा और जिव्हा को सहस्त्रवार धिक्कार है ! बदमाश ! तू !! और तेरी "कमला," दोनों स्वर्गीय सुख का भोग करो। मुझे ऐसा स्वर्गीय सुख नहीं चाहिये ! मुझे तो यह दुख ही बहुत प्रिय लगता है, इस संसार में सुख यह क्या है केवल एक मन ही की कल्पना है, नहीं तो संसार में कर्मानुसार सुख के बाद दुख और दुख के बाद सुख नियमानुकूल मिलता ही जाता है। यह बात मैं अच्छी तरह समझती हूं।"

"जो बदमाश रांड कहती है। कि किसी को भी शंका नहीं होगी किन्तु दुनियां तो चतुर है तेरी जैसी अन्धी नहीं है, जोकि नहीं जानती हो, मालूम नहीं कि की हुई गुप्त बात, स्त्री को कही बात, और अघोर तथा नीच कर्म ये तीनों जल्दी से ही प्रगट हो जाते हैं। यदि गुप्त रह जाय तो क्या पूर्व भव में तो उसका फल भोगना ही पड़ेगा। क्या वे न्यायी और निश्चल कर्म तेरे जैसे पापी पर नहीं कोपेंगे ! और तेरे किये हुए कर्म का फल न देंगे !! याद रख अवश्य देंगे !!!

यह चिन्तामणिरूप मनुष्यावतार क्या फिर से मिल सकता है ? तो फिर ऐसी मणिमय देह पाकर के भी, ऐसे अघोर कृत्य आदर कर, उसपर भी तागड़धिन्ना करने वाले हरामी जीव को सहस्त्र वार धिक्कार है !

इस संसार में अनेक संकट पर भी सत्कर्म कर जीना उसी का नाम सच्चा जीवन है, मनुष्य की साड़े तीन मन की काया में नाक कितनी तनिक चीज़ है ? मनुष्य तो कई एक धोके से फंसाने आता है परन्तु अपने आगे पीछे का विचार करना चाहिये, सिर पर कलंक लगा कर फिरना, इससे तो गला घोंट कर मरजाना अच्छा है यद्यपि आत्म-हत्या करने में अधिक पाप है, तथापि ऐसे अघोर कृत्य से तो मैं उसे हजार दर्जे अच्छी समझती हूं। समझी ! इसके सिवाय अब एक भी शब्द मुंह से मत निकालना ऐसा क्रोधित होकर मोतीगौरी ने उससे कहा !"

"वहिना ! तुम्हारी बुद्धिमता जाने दो ! काल को देखकर जरा विचार करो, अभी तो पाड़े की मां पीछे ही है मुह से बकदेना तो सहज है परन्तु

पीछे से कथनानुसार चलना वहुत कठिन है, आप के ये पातिव्रतरूप बचन वहां तक हैं जहाँ तक कि एकाध सुन्दर तरुण, श्रीमंत बिलासी पुरुष न मिले मिलने पर ये वचन मुहं में ही रह जायंगे !

अग्नि का वल पानी नहीं मिले वहाँ तक हीं रहता है ! मनुष्य का मद कहाँ तक ? जहाँ तक कि कोई घटना सिर पर नहीं बीते, जलशिगी का ज़ोर कहां तक ? जहां तक कि लोहे का काँटा नहीं घुसे वहां तक, विश्व का वैभव कहां तक ? जहां तक कि मरण शय्या नहीं हुए वहां तक, इसी तरह आप की यह बुद्धिमता कहां तक कि प्रेम पाश में नहीं पड़े वहां तक ही है !

"जब शरद पूर्णिमा का सर्वोत्कृष्ट सुख का दिन हो, पूर्णेन्दु अपनी अनुपम प्रभा का प्रकाश पृथ्वी पर फैंक रहा हो, उसी समय पति पत्नी, अनेक प्रकार की अलंकार से अलंकृत हो, एक दूसरे को परस्पर आलिंगन देते, झरोखे में बैठे हो, प्रियतम खुद के नाज़ुक वदन में प्रवेश हुई, प्राण प्रिया के बदन पर एक हाथ तो दाढी पर और दूसरा शिर पर फेरते हुए हंसी मजाक कर रहे हों, उसके गौर

वर्ण गुलाबी गालों का चुम्बन कर रहे हों, वैसे ही प्रिया भी प्राणाधार के अधरामृत का पान परम आनन्द से करती हो. इस तरह कामरति को भी लज्जित करने वाली यह दम्पती वर्ग का रसिक जोड़ा एकमेक हास्य विनोद करता हुआ शतरंज की बाजी आनन्द से खेल रहे हों।

यह सब जहां तक आपने नहीं देखे, वहाँ तक ही तो यह विचार करती हो प्रातः काल उठ कर ठंडी रोटियां खाने वाली हलवे का क्या स्वाद जान सक्ती है? अविवाहित कन्या को क्या साक्षात् स्वर्ग सुख का अनुभव हो सकता है? इसी तरह आप भी तरुण अवस्था में आने से विधवा होगई इसी लिये तो ऐसे शब्द बोलती हो, परन्तु शिशिर ऋतु और उसमें पड़ने वाली जबरदस्त ठण्ड को क्या तुम बिना स्वामी के सहन कर सकती हो, क्या तुम नहीं जानती कि पढ़ना लिखना ये विद्यायें तो सहल हैं। परन्तु कामाग्नि की विषय ज्वाला बड़ी ही भयङ्कर है।

काम को जीतना बहुत मुश्किल है। वह रांड कमला जिसने कि एक भी घर नहीं छोड़ा है, इसी

से वह प्रख्यात् होगई है, परन्तु आप के तो एक रशिकलाल सो भी आपके पति का प्रिय मित्र ! साथ ही आप भी, विद्वान् ! इस लिए कोई जान नहीं सकता। कारण कि कार्य्य करने में बुद्धि खर्च करनी पड़ती है, देखो न मेरी बात को कौन जानता है ? सिर्फ एक आपके ही सन्मुख सो भी आपको स्नेही जान कही है !

जब आप सन्मार्ग दिखाती हुई, मुझपर क्रोधित होती हो, तब मैं विचार करती हूं, कि आप दुख रूपी सागर में ही गोता लगाना चाहती हो !

विचार तो करो, कि आपके पिता ने जब स्वार्थ साधन के लिये, आपको मरोणन्मुख बुड्ढे के गले को देदी थी, परन्तु उस बुड्ढे के भी मर जाने पर यदि आप एक अच्छा, सुन्दर नवयौवन, पति बनालो, तो क्या दोष है ? इसलिए मेरा कहना मान काम-देव जैसा सौन्दर्य्यवान् रशिकलाल से, प्रीति कर अपना जीवन सुखमई बनालो, क्या अब तो आपको मेरा कहना रुचता है न ? रुचेगा तो ठीक ही है वरना पीछे पछतावोगी, ऐसा रत्न गौरी ने मुंह बना कर कहा।

"हट ! रांड !! लुच्ची !!! तेरा काला मुँह हो ! कुलटा ! कहते हुए शर्म नहीं आती ! इस तरह तैंने कितनी ही पालिसी चला कितनी ही भोली भाली स्त्रियों को लुभाई ! ऐसी दुष्ट सलाह देते हुए तेरी जीभ के सौ टुकड़े क्यों नहीं हो जाते ! याद रख ! क्या सिंह भी घास खाता है ? क्या विषधर सर्प भी कभी अमृत देते हैं ? सूर्य भी क्या पच्छिम में प्रगट होता है ? मेरु पर्वत भी क्या कभी चलायमान होता है ? यह सब वस्तुएं नियमानुसार होती हैं ! चाहें यह अपनी मर्यादा छोड़ भी दें, परन्तु तो भी मैं तेरे दुष्ट विचारों के तावे नहीं होने की ! समझी ?

काळे मुंह की कुत्ती ! तेरा यह रूपवान् ! रसिकलाल, अरे ! इसे भक ! भक !! करती होली की लो में डालदो ! जिससे कि वह विचारी भोली स्त्रियों को भ्रमाता रहजाय ! और रांड ! तेरी इस काया में कीड़े पड़ें ! अब मैं समझी कि रांड तुझे इस काले मुँह के कुत्ते........"रसिक ने ही भेजी है ! और तेरा पापी पेट भर तू मुझे यहां समझाने आई है ! क्यों ? मेरे दुखको दूर कर सुख में डालने

की तेरेमें सत्ता है / क्यों ?

उठ रांड ठट्ठे की डाकिन। तेरा काला मुंहकर यहां से चलीजा ! नहीं तो यह कोई दुष्ट रांड ! मुझे दुष्कर्म में फंसाने आई है ! ऐसा कहके चिल्ला तेरी फजीहत कराहूँगी " मोती गौरी ने महा भयानक रूप धारणकर रत्नगौरी के मोह रूपी बाणों के धैर्यास्त्र से वेध दिया।

"अच्छा मैं तो यह चली इतनी नीली, पीली, क्यों होती हो ? मैंने तो तेरे ही हित की बात कही थी ! और वही तुझे नहीं रुची तो खैर ! दिल में पछतावो तो आता है। परन्तु अब भी यदि मेरा कहना मान, रशिकलाल से तू यदि प्रेम कर लेगी तो राजा की रानी से भी अधिक सुख भोगेगी, और यह बात कोई दूसरा नहीं जाने इसका भी उपाय किया जायगा। इस विषय पर अच्छी तरह विचार कर मान। नहीं तो पीछे पछतायगी।" रत्न गौरी ने ऐसा कहा।

"बस अब एक दम बोलना बन्द कर। रांड की जीभ ही खेंच निकालना बाकी है, नकटी .... निर्लज्ज चलीजा, जाती है कि लात जमाकर

निकालूं ।

"लात अच्छा तो तेरी भी सत्यता देख लूंगी ! मैं भी देखती हूँ कि तू सिद्ध की छोकरी है" ! इत्यादि कहती हुई रत्न गौरी खुद के कार्य्य में निष्फल हो निस्तेज मुख चली गई ।

सातवां परिच्छेद.

पा ठकगण! देखो इस संसार में कपटियों का जाल! जो इस समय अपनी निष्काम वृति वाली मोती गौरी की जगह दूसरी कोई लोभी स्त्री होती तो, उसे रत गौरी अपने जाल में फंसा कलङ्कित कर देती। सत्य है कुसंगति का प्रसंग इस संसार में क्या नहीं करा सक्ता! उसके प्रमाण में यह एक ही उदाहरण बहुत है।

एक "गौमतीपुर" नामक सुंदर शहर था, उस में एक हरदत्त नामक धर्म चुस्त पवित्र ब्राह्मण रहता था उसके उत्तम कार्यों से वह गांव भर में पूजनीय था, उसकी स्त्री का नाम "आनन्द गौरी" था, यह अपने पांच वर्ष के पुत्र को छोड़ स्वर्ग सिधार गई थी, जिससे हरदत्त ने बच्चे की रक्षा के लिए एक गाय रक्खी थी, वह गाय भी सुशील स्वभाव की थी, उसे रोज चरने ले जाने के लिए एक अच्छे ग्वाल को सौंपी थी, इससे वह ग्वाल

हमेशा प्रातः काल आ, गाय को चराने ले जाता था, और सायङ्काल को पुनः ला, बांध दिया करता था, हरदत्त उसका दूध निकाल उसे छोड़ दिया करता था, वह रात भर ग्राम में घूम प्रातःकाल घर आ जाती थी, जिससे हरदत्त तुरन्त ही उसे ग्वाल के सुपुर्द कर देता था, इस तरह वह गाय सुख से दिन बिताती थी।

एक समय उस गाय को एक हरामी उद्दण्ड सांड मिला, मिलनें पर सांड ने प्रश्न किया कि तू इतनी दुबली क्यों ? देखना मेरा बदन कैसा बना है ?

भाई मैं दिन को तो ग्वाल के कब्जे में रह वह जहां चराय वहां ही सूखी घास चरती हूँ। और रात्रि को भी गांव में मारी २ फिरती हूं, और तुझे तो मनुष्यों की सूनी चीजें मनमानी चरने को मिलती हैं, इस तरह तू मस्त भी हो तो क्या नवाई है ? गाय ने इस तरह उसके प्रश्न का समाधान किया।

"मूर्खा ! तो तू इतना कष्ट क्यों सहन करती है, एक दिन मेरे साथ चल और देख तो सही कि कैसा हरा घास चरने को मिलता है थोड़े ही दिन

तू वहां चरेगी तो मेरी जैसी मदोन्मत हो जायगी ऐसा सांड ने उपदेश दिया।

"भाई! मुझे मदोन्मत नहीं बनना! मुझे तो इस सूखी घास में ही सन्तोष है। यदि मदोन्मत बनने के लिए मैं भी तेरे साथ चलूँ, और खेत के मालिक को मालूम पड़जाय तो क्या हालत होगी? और यदि नहीं मालूम पड़े तो भी क्या हुआ? पूर्व भव में कर्म तो अवश्य ही भोगने पड़ेंगे। इसलिए इस तेरी अकल को तेरे ही पास रख" गाय ने नम्रता से उत्तर दिया। तू तो यों ही भय करती है मैंने जो खेत पसन्द किया है वह ज्वार का है, ज्वार अच्छी तरह निकल गई है दूध चल रहा है। चारों ओर घास खड़ी है। इससे कोई देख भी नहीं सकेगा, सिर्फ एक तरफ जाने का रास्ता किया है। वहां जाकर घुसे कि बस फिर चरने की बहार है, साथ ही विशेष सुगमता यह है कि खेत का कोई रख-वाला नहीं है। तो तू ही कह कि जब ऐसी स्वतंत्रता से चरना मिलने पर भी अपन क्यों इधर उधर भटकते फिरें? इसलिए सिर्फ एक ही रात्रि को चल। और तेरे मन को खात्री करले। इससे जो

तुझे डर लग रहा है, वह सब दूर हो जायगा और फिर तुम्हीं मेरे ही जैसा रास्ता पसंद करोगी, क्यों अब समझी न ! सांड ने गाय को ललचाई।

पाठकगण ! सांड़ के अनेक बार समझाने पर गाय का मन ललचाया और उसकी मति भ्रष्ट हुई, और उसी रात्रि को वह सांड के साथ गई सारीरात मन मुताविक चरना मिलने से गाय मन में बहुत खुश हुई, तत्पश्चात् गाय हमेशा सांड़ के साथ २ चरने जाने लगी॥

जो खेत इनने पसंद किया था वह खेत गांवके मुखिया पटेल का था, एक दिन खेत का मालिक घोड़े पर बैठ अचानक उसी खेत की ओर जा निकला जाकर देखा तो आधा खेत उस गाय और सांड़ ने सफाचट कर दिया था, पटेल के क्रोध का पार नहीं रहा, तुरन्त ही घोड़े को पीछे फिरा और घर पर आ क्रोधित नेत्रों से रखवाले को धमकी दे कर कहा, "लुच्चे तुम सब रात्रि को कहां पड़े रहते हो ? कि जिससे तमाम खेत का सत्यानाश होगया ? खबरदार ! आज रात्रि को उनकी चौकसी रक्खो, जो कोई भी ढोर वहां आवे; उन्हें मेरे पास पकड़

लावो कि जिससे खेत का नुकसान उनके मालिक से ले लिया जाय, इतना कह ज़रा शाँत हुआ।

नौकरों को पूरी २ नसीहत मिल जाने से वे आज ही रात्रि को (जिस तरह हो उस तरह ढोर को पकड़लाना चाहिये) खेत में रखवाळी के लिये मन में कई एक विचार करते हुए गए और वहां जाकर ढोरों की रखवाळी के लिए छिपगए।

समय होने पर वह सांड और गाय दोनों चरने के लिये आये और इधर उधर चारों ओर देखा, किन्तु किसी को भी न देख, निर्भय हो चरने लगे, थोड़ी देर बाद वे रखवाले उन्हें पकड़ने की गरज से चुपके से उठे, उसी समय वह हरामी बदमाश सांड मनुष्य की आहट पा, भागने लगा, कि इतने ही में चारों ओर से रखवालों ने उन्हें घेर लिया परंतु फिर भी सांड लट्ठ खाते हुए बगैर छलांग भागगया और विचारी गरीब गाय पकड़ी गई॥

पकड़े जाने पर भी क्रोध के आवेश में उन रखवालों ने पांच चार लठ्ठ और मार दिये, पीछे उसे मज़बूत बांध, पटेल के पास ला, खड़ी करदी, खड़ी करने पर वह गाय खुद के पुरोहित हरदत्त की

माळूम पड़ने से, एक नौकर द्वारा उन्हें बुलाया, उसने आ खुद की गाय को बन्धी हुई देखी।

पटेल ने कहा किः-ब्रह्मदेव क्या करूँ यह गाय आपकी निकली, यदि दूसरे की होती तो, मैं खेत के नुकसान की कौड़ी २ वसूळ करता, परन्तु आप को ऐसी गाय छोड़ दूसरे का नुकसान कराना उचित नहीं, यदि फिर भी ऐसा होगा तो, आपकी भी शर्म नहीं रक्खी जायगी" इत्यादि ठपका दे गाय उनके हवाले करी।

हरदत्त गाय ळेकर घर आया, और मनमें पटेल का नुकसान देख, पश्चाताप करने लगा, पछताते २ एक युक्ति याद आगई, उसने सुनार से एक बड़ा डण्डा बना, उसी दिन से गाय के गळे में डलवा दिया, गाय भी मन में मुरझाने लगी और उसी दिन से उसने सांड़ नौ गज से नमस्कार किया।

थोड़े ही दिन बाद सांड़ फिर गाय को मिला और कहा कि "चल"।

गाय ने कहा-"कहां"

सांड़ ने कहा-क्यों भूल गई? उसी खेत में।

गाय ने कहाः-"भाई खेत का नाम मत ळो।

अभी तक मेरी पीठ पर पड़े हुए लट्ठ का निशान् मौजूद है, यह मैं भूल नहीं सकती, चाहे तू तेरे दिल में आय वहां जा, परन्तु मैं अब तेरे साथ नहीं जाने की"।

सांड ने कहाः-"बस इतने में ही डर गई? इतने दिन मज़ा उड़ाया, तो एक दिन ऐसा ही सही। किन्तु क्या रोज २ ऐसा होता है? इसलिए आज बे फिक्र चल"।

गाय ने कहाः—"चाहे जो हो परन्तु अब तो मैं तेरी सोबत नहीं करने की, जो तू मेरे आने की आशा रखता है, सो वह सब व्यर्थ हैं कारण किः-

"कुसंगात संग दोषेण, जायते संग विक्रिया!
एक रात्रि प्रसंगेन, काष्ट घन्टा विडम्बना!"

अर्थात्-"तेरे साथ में एक रात्रि के प्रसंग से ही, घण्ट रूपी कष्ट दायक यह बड़ा भारी डंडा मेरे गले में आ पड़ा है, और मार खाई सो तो मुफ्त में ही"। तो फिर भविष्य में तेरे साथ रह हमेशा के सम्बन्ध में कितना कष्ट उठाना पड़े? इसलिये अब तू अपना मुंह मत दिखा। सांड को ऐसा उत्तर मिलने से वह एक दम चला गया।

पाठकगण ! इस उदाहरण से आप समझ गए होंगे कि एक रात्रि के कुसंग से तो इतना भारी दुख उठाना पड़ा, तो फिर हमेशा के लिये कुसंगी मनुष्यों की संगती, अपना क्या नहीं कर सक्ती ? सब कुछ कर सक्ती है निर्व्यसनी को व्यसनी, सद्-गुणी को दुर्गुणी, सत्यवादी को झूठा, दातार को मक्खीचूस, साहूकार को चोर, आचारी को दुरा-चारी, सती को कुशीला अर्थात् उच्च को नीच बना देती है ?

इसलिए भारत निवासी ! रत्न भूमि रूप ! मेरी आर्य बहिनों !!! आप स्वप्न में भी ऐसी कुलटा स्त्री की सोबत मत करो ! आप भी ऐसी दुष्ट ! दुरा-चारिणी ! के काले मुँह की तरफ कभी भी मत देखो, मेरी आपसे यही प्रार्थना है ।

अष्टम् परिच्छेद.

सती का स्वर्ग गमन
और
पापी का पराभव ।

तुर्थ प्रहर का समय है, अरुणदेव सर्व सरिता के इष्ट चरण की मुलाकात के लिये जल्दी २ से गति करने लगा, सूर्य्यास्त हो जाने से पश्चिम दिशा का गगन मण्डल, खुद के स्नेही को समुद्र में पड़ता जान, उसका वियोग सहन नहीं होने से गुलाल जैसा गुल वहार वर्ण का, झब्बा धारण कर, रंग दिखाता हो। ऐसा भास्य होने लगा दूसरी पूर्व दिशा के तरफ, पूर्णेन्दु, खुद की अनुपम प्रथा की शीतल रश्मि फेंक, दिन की गर्मी से तप्त हुई खुद की प्रिया पृथ्वी को, शांतता देता हुआ, दृश्य मान होने लगा, धीरे २ पृथ्वी भी खुद के प्रियतम की, अमूल्य रूपे की साड़ी वदन पर पहिन प्रीति रूप परमानन्द का पान करने लगी,

प्राणी मात्र भी दिन के काम से श्रमित हो, अपने २ निवास स्थान की ओर गमन करने लगे, देव मन्दिरों में आरती का समय हो जाने से एक पर एक, घण्टा तथा घड़ियालों की नाद कर्ण पर गूँजने लगी प्रभूके भक्त* दर्शनार्थ और कामीपुरुष अपनी दुष्ट इच्छाओं को पार पाड़ने के लिये, अरे कहो कि किये हुए पाप कर्मों को "वज्रलेपन भविष्यति" करने के लिये एक पर एक, सप्रेम से मन्दिर की तरफ प्रयाण करने लगे, इसी तरह सती स्त्रियां, और कुलटा स्त्रियां उसी काम के लिये उतावली २ जाने लगी।

पाठकगण! ऐसे समय में पेटलाद शहर की पूर्व दिशा के तरफ एक विशाल सुन्दर मान सरोवर का निरीक्षण करने के लिए, मैं आपको सूचित करता हूं! सरोवर का निर्मल जल कांच के माफिक दिखाई देता था, मन्द २ पवन उस सरोवर में ऊपरा ऊपरी लहरें ला, उसकी स्थिरता का भङ्ग करना, चन्द्रमा खुदकी किरणों फैला रहा था, तथा इस मनरूपी सरोवर में, शान्ति रूपी जल में, प्रवर्त्ति रूप लहरें ला, विश्वासरूपी स्थिरता का भङ्ग करता,

---

*देव मन्दिर वह उसकी पूजा आदि के कार्य से हम ... नहीं हैं।

विपयादि रूप जो पवन है, उसका दृश्य दिखला रहा था, सरोवर में चित्र विचित्र नाना प्रकार की मछलियां किल्लोळ कर रही थी, चारों तरफ के मन्दिर, सरोवर की सौन्दर्यता को विशेप बढ़ाते थे स्त्रियों के पानी भरने को अच्छे २ पत्थरों के घाट बने हुए थे और रात्रि में किसी को पानी भरने में तकलीफ न पड़े इस लिए, लालटेन लगाये गये थे, बस ! वाचक !! आप सरोवर के नजदीक पेटलाद शहर में निवास करने वाले एक श्रीमन्त सेठ के विशाल बगीचे में प्रयाण करो ! और वहां एकाध वृक्ष की शरण ले बोले विना गुप चुप जो कुछ हो वह देखा करो !

बाग में गुलाब, गुलदावदी, परिजातक, सौभाग्य सुन्दरी, साहेळी, टगर, तुलसी, गुलछड़ी, गुलबकावळी, बटमोगरा, इत्यादि नाना प्रकार के फूलों से सुशोभित वृक्ष इन्ट के, त्रिकोण, चतुष्कोण, पञ्चकोण, षटकोण, अष्टकोस, गोल लंब गोल इत्यादि अनेकाकृति से मध्य भाग में लगाये गये थे, हरएक वृक्ष के आस पास भी छटाने में आई थी और उनके बाजू बाजू चान्दी की भान कराने वाला, शङ्खला

तथा छीपा लगाकर और भी शोभा बढ़ाई थीं, फूलों के सिवाय नारियल, केला, दाड़िम, जामफल, नारङ्गी पनस, नींबू, अञ्जीर, आलू, अन्नास, इत्यादि वृक्ष फलों से लदे पृथ्वी को नमन करते, सज्जनों को दिखला रहे थे, ऐसी जगह में मन्द सुगन्ध पवन मग़ज़ को तरकर अनहद आनन्द प्राप्त करा रही थी, बीच में राह थी जिसपर सङ्गमरमर के पत्थर जड़ाये गये थे, उनमें से एक राह सीधी सरोवरपर और दूसरी मन्दिर पर जातीथी वह राह इतनी देदीप्यमान की गई थी कि उसे देख मनुष्य स्थल को जगह जल समझने लग जाता था चारों ओर लोहे के ढालू खम्भे उनमें तार फंसा, पूरी तरह से बाग को रक्षा को गई थी। बाग के पूर्व पश्चिम दोनों तरफ दो बड़े लोहे के दरवाजे बनाये गये थे, मध्य में एक छोटा सा बम्बई फैशन का बङ्गला था, उसमें बिजली की लाइट, दिनका मध्याह्न काल दिखला रही थी, बाग में भ्रमण कर थके हुए स्त्री पुरुषों के आराम लेने के लिये योग्य जगह बेंचे रक्खी हुई थी, जिनमें से एक उत्तम गुलाबी मख़मल की जड़ी हुई सुन्दर नकाशीदार बैंच भी थी।

उसपर एक पच्चीसेक वर्ष का तरुण पुरुष बैठा था, उसका वदन गोरा था, अर्धे मस्तक पर झुकी हुई एनकालेरी बेंगलोर केम्प में से निकले हुए गुच्छेदार, क्रिश्चियन केश, कासमेटिक लगा, लेडी फेशन के घुमाने में आए थे, जो कि उसकी सुन्दरता को बढ़ा रहे थे, साथ ही कुत्ते के पट्टे के नाम को जाहिर करने वाला जर्मन कालर पहिन "इंडियन डाग" का खिताब पा रक्खा था ! और गले में फाँसी रूप नेकटाई भी धारण कर रक्खी थी ! वदन पर बढ़िया ढाके की मलमल का शर्ट पहिने हुए था प्लीट पर लगे हुए गोल्डन बाम्बे फेशन के मनोरंजक नक्काशीदार तीन बटन चन्द्र के प्रकाश से भी ज्यादा रोशनी दे रहे थे, शर्ट पर चढ़ा हुआ आधा नीला और आधा आसमानी मखमल का, डबल कालर का, वास्कट जो कि घोड़े के "तङ्ग" को नाम रखवाता था, वह भी अधिक शोभा बढ़ाता था, ऊपर के जेब में सुवर्ण से बँधी हुई, कोई बड़े मेकर की बनी हुई पेटेन्ट वाच लटका रक्खी थी, सर्वत्र शांतता होने से उसकी टिक-टिक आवाज़ कर्ण पर आती थी, सीने के जेब में एक सुवा पँखी जापानी

रेशम का रूमाल घुसेड़ रक्खा था, पांव में पानी लग जाने से मेनचेस्टर का एक बारीक धोती जोड़ा बहुत सफाई से पांवों पर चिपक गया था, पांव में ब्लेक कालर के चक चकित विलायती बूट शोभित थे, हस्तांगुली में पहनी हुई मुद्रिका की शोभा तो विचित्र ही थी, पास ही में इमिटेशन सिल्क की लेडी फेशन की छत्री पड़ी हुई थी, यह सब उपरोक्त शोभा उसकी श्रीमन्ताई तथा शौकीन पने का भान, कराती थी।

बैठा हुआ तरुण पुरुष पान चावता हुआ, पांव को इधर उधर हिलाता, आंखों को नचाता, कभी खड़ा हो जाता, और कभी बैठ जाता, मन में अति मग्न हो, फिर २ कर पीछे देखता था, इससे मालूम होता था, कि वह किसी की राह देख रहा हो, इतने में ही बाग के पूर्व दिशा का दरवाजा खुला, एक तरुण बाला आती हुई उसके दृष्टि पड़ी, तुरन्त ही नींद का मिथ्या बहाना बना मेज़पर सोगया, आने वाली तरुण बाला श्वेत वस्त्र से आच्छादित थी, ललाट पर भस्म लगा रक्खी थी, ग्रीवा में आभूषण रूप सिर्फ एक माला रक्खी

हुई थी, हाथ में वङ्गड़ी के बदले माला रक्खी हुई थी, करकमल में लिये हुए, देव सेवा के स्वच्छपात्र चन्द्र के प्रकाश में चकमकाहट कर रहे थे, जिससे कि उसका गौर वर्ण विशेष शोभा देता था। इस परसे वह वैधव्य दशा को प्राप्त हुई परमेश्वर की भक्ति के निमित्त आई हो, ऐसा ज्ञात होता था, तरुणी नासाग्र दृष्टि रख देव मन्दिर में पूजा कर, रात्रि होने से जल्दी २ पैर उठाती घर की ओर जाने लगी।

इतनेमें ही मेजपर सोये हुए, तरुणने "वाह ! रमणी वाह !! ठीक समय पर मिलाप हुआ ऐसा कह, युवती का सुकोमल हाथ पकड़ा और आगे जाने से रोकी, कोई अपरिचित व्यक्ति ने एक दम हाथ पकड़ा देख, युवती चमकी और कांपी, कर कमल में से पूजा के पात्र गिर गये, शरीर में वेग से रक्त वहने लगा, रोम २ खड़े होगये गौर वदन लाल हो गया और धीरे २ सर्वाङ्गशीत छागई मुंह में से एक भी शब्द नहीं बोल सकी, क्षण भर मौन रही !

"हृदयेश्वरी ! निर्भय रहो ! ऐसी भयभीत क्यों हो रही हो ! (हस्त जरा इशारा युक्त दबाकर) क्यों

बोलती नहीं हो। शर्माती क्यों! ऊँचा देखो ऊंचा! मेरे सामने! ऐसा नीचे कब तक देखोगी! लो अब मौन पने को तज़कर विरहानल की प्रचण्ड ज्वाला से जलते हुए इस तुम्हारे प्यारे को प्रेम-रस देकर शान्त करो!" युवक ने प्रेम से कहा।

"भाई! भाई!! यह क्या बोल रहे हो!!! आप जैसे सज्जनों को ऐसे बचन शोभा नहीं देते, विचार करो! अबला पर ऐसा ज़ुल्म मत करो, भाई मेरा हाथ छोड़ दो" ऐसा उस तरुण युवती ने धीरज धर कर करुण स्वर से कहा।

"हाथ छोड़ने की अब आशा मत रखना! भाई कह! राई चढ़ाने की तुम्हारी पंडकाई मेरे सामने नहीं चलने की, देखो यह स्थल एकान्त है, तुम्हारे और मेरे लिवाय यहां कोई नहीं है, इसलिए अब फिजूल देर न कर, तुम्हारे पर आशिक हुए, इस भोगी भ्रमर को निराशा की गहरी खाई में नहीं डालते पूर्णेन्दु समान शान्ति दाता, हे! प्राण बल्लभा! ठीक समय मिला है इसलिए प्रीति रस का पान करने तयार हो जावो"! तरुण पुरुष ने ऐसे मिश्रित शब्द कह समझाए।

"भाई ऐसे अयोग्य वचन ऐसा पाप का बोझा मत बांधो? चाहे एकान्त स्थान हो अपने सिवाय कोई दूसरा नहोतो भी कर्म तो सर्वत्र विद्यमान हैं न? तो फिर कर्म का भी तो जरा डर रक्खो!"

"पर स्त्री का प्यार घर बार को गुमाने वाला है सुन्दरी का स्नेह देह का नाश करने वाला है। कामनी से काम करना बदनामी लाने वाला है, युवती से प्रीति करना पुरुषार्थ को खोना है, और गोरी से चित लगाना अन्त में मौत की निशानी है, इसलिए तुम्हारी यह निर्बुद्धि दूर करो नीति को विचारो और इस अबला का हाथ परि हरो! यही तुम्हें श्रेय है, साध्वी स्त्री ने धीरे से कहा!"

"चल जा, कर्म वाली आई है! कर्म को कौन पूछता है! मेरा चाहे जो हो उसका मुझे कुछ भी फिक्र नहीं है। क्यों अब कबूल है कि नहीं? कि बलात्कार करूँ? जल्दी से कह? जो तुझे मन्जूर है, तो तुझे राजा की रानी से भी ज्यादा सुख मिलेगा, अब देर मत कर! चल।" आतुर हुआ!

"पापी! ऐसे कठोर शब्द कहते तेरी जीभ

क्यों नहीं जाती तू मुझ अबला को अकेली जान सताना चाहता है क्यों ? किन्तु यह अबला नहीं प्रबला है। याद रख कि पृथ्वी रसातल को चली जाय, शशि शीतलता को छोड़ दे, दिन कर हिम रूप बन जाय, तौभी हे कामी ! मैं तेरे ऐसे दुष्ट विचारों को कबूल नहीं करने की। " ऐसा उसने क्रोध से कहा।

"देखूं तू कैसी प्रबला है। सो अभी ही ज्ञात हो जायगा ! तेरे ऐसे वचनों से मैं कदापि नहीं डरने का, तेरी जैसी अनेकों को मैं भोग चुका हूं ! तो फिर तेरी क्या बात ! बोल ? इस समय तेरा कौन बैरी है ? नाहक बोल कर तू तेरा भविष्य बिगाड़ रही है ! विचार कर ! कि मेरे जैसा छबीला तुझे स्वप्न में भी नहीं मिलेगा ! इस लिए हाथ आया हीरा तू क्यों गुमाती है ? और अन्त में तो बलात्कारसे तावे होना ही पड़ेगा, यादरख ! कि मैं कदापि तुझे छोड़ने का नहीं हूं। तो फिर तू जल्दी क्यों नहीं समझ जाती ! सिर्फ तेरी मनोहर छबी मेरे हृदय में रम रही है, और इसी से तेरे विषमयी शब्द श्रवण करता हूं, नहीं तो " पापी "

शब्द का बदला तुझे अभी ही मिल जाता ! क्यों अब मानती है कि नहीं ? कि बदन में जलती हुई मदन की आग को प्रयत्न से शान्ति करूं ?" युवा ने क्रोधित हो कहा !

" अरे ! विषय में अन्धे हुए कुत्ते !! जरा कान धर !!! " (सरोवर के तटके तरफ से सारंगी का सुन्दर सरोद सुनाई दिया).

"मुग्धे अभी तक तैने हारमोनियम, फोनोग्राफ, का फक्कड़ स्वर नहीं सुना है; इससे तू क्या जाने ! इसी से तू पहिले मुझे भेट ! और पीछे मेरे वैभव का अनुभव कर ! ऐसा तरुण ने घमण्ड से कहा !"

"अरे ! मान के वशीभूत हुए नीच !! पिशाच !!! परस्त्री पर आशक्त हो मौत बिना ही क्यों मरता है ! तेरे रूप और वैभव को आग लगा जलादे ! तेरे जैसे मनुष्य के बदले तेरी माता के पेट में यदि पत्थर भी पैदा होता तो ठीक होता ! क्योंकि वह पांवों का मैल निकालने के काम तो आता पर तू तो "धोबी का गधा न घरका न घाटका" इस कहावत के अनुसार है ।"

अरे ! नीच !! नकटे !!! अनेक स्त्रियों के शील

लूटने में तैने क्या बहादुरी की ? तेरे जैसे स्त्रियों की लाज लूटने वाले को सहस्र वार धिक्कार है ? परन्तु तू मुझे वैसी स्त्री न समझना ! समझा ?

कुटील ! निर्लज्ज !! चाहे तू मत मर !!! मैं प्राणान्त तेरे तावे नहीं होने की । खबर नहीं है कि द्रौपदी की लज्जा लेने वाळे की क्या दशा हुई ! तथा सीता की लज्जा लेने वाळे रावण के भी मस्तक छिन्न भिन्न कर दिए गए थे ! इतना ही नहीं किन्तु उसके कुल का भी नाश होगया । खबर नहीं कि पाटण के प्रख्यात् राजा " सिद्धराज " ने "राणा देवी" को बलात्कार के साथ पटराणी बनाने का विचार कियाथा, कि जिससे उसके वन्शका ही नाश होगया, चाँपराज हांडा की स्त्री सोनाराणी पर झूठा कलंक लगाने से ही शेरवेक का शिरच्छेदन किया गया था ।

दुष्ट ! नीच !! सुरपति !!! और शशांका सरीखे परस्त्री से प्रीति करने वाळे को भी रत्ती भर सुख नहीं मिला ! तो फिर तेरी क्या गणना सचमुच में ! "विनाश काले विपरीत बुद्धि" ऐ दुष्ट ! तेरा भविष्य बिगड़ा हुआ माळूम पड़ता है ।

इसलिए ! ऐ !! अक्ल के दुश्मन !!! अक्ल को ज़रा पास आनेदे । ऐ नर पशु ! तेरी विषय वासना को दूर कर ! मेरा हाथ छोड़दे ! नहीं तो फिर यौवन के मस्त हुए मर्कट ! अरे ओ ! नरपिशाच !! परस्त्री के साथ बलात्कार कर कुछ फल नहीं निकलेगा !" साध्वी स्त्री उग्र रूप धारणकर तिरस्कार युक्त वचन बोली:।

"कमजात ! लुच्ची !! बस !!! अब तेरा बोलना बन्द कर ! क्या मैं मूर्ख ! क्या मैं मर्कट ! ठी… क अच्छा बुला तेरे रक्षक को ! मैं भी देखता हूं कि वह कैसी मदद करता है " ऐसा कहते ही उसका हाथ छोड़ नीचे झुक, कटील भाग पकड़, उसे पृथ्वी पर गिराना ही चाहता था, कि उसी समय सती अपने शील की रक्षा निमित्त, युवक के पास से छूट, एक दम मानसरोवर की ओर भागी !

भागकर कहां जाती है ! अभी ही पकड़ लूंगा ! ऐसा कह कामान्ध पुरुष उसके पीछे जोर से भागा ! भयभीत युवती भी जोर से भागने लगी ! इतने में ही मान सरोवर का किनारा आ पहुँचा; युवती ने भी प्राणों की परवा न करते, अन्तःकरण से आ-

खिरी उद्गार निकाला कि "हे ! पवित्र मान सरोवर ! मैं तेरे शरण आती हूं ! तू मेरी इस पीछे पड़े हुए दुष्ट ! से रक्षा कर । ऐसा कह एक दम सरोवर में जा गिर पड़ी ! क्षण में ही थी या नहीं थी, ऐसी होगई, यह सती तो यों स्वर्ग सिधार गई, बाद एक और धमाका हुआ. पापात्मा ! गिरा ! सचमुच में कामान्ध पुरुष को कुछ नहीं सूझता ! यह युवक भी कामान्ध हो, युवती को पकड़ने के लिए दौड़ रहा ही था, कि एकमद पैर फिसल जाने से उल्टे मुँह पत्थर पर पड़गया, पड़ते ही उसका शिर फटगया, बेंगलोर कैम्प दूर जा पड़ी. कासमेट से घुमाए हुए सफाईदार बाल बिखरगए, ग्रीवा पर धारण किया हुआ कालर भी फटगया, नेकटाई भी निकल गई, चुस्त वास्किट ने भी चूस लिया, विषयांन्ध बन परस्त्री की आशा रखने वाले की दशा, आज पत्थर पर लम्बे चौड़े रूप हो रही है, धक २ करती लोहू की नदी बहने लगी और क्षण मात्र इस संसार से एक पापी जीव चला गया ।

अहाहाहाहा !!! पाठकगण ! यह कैसा न्यायी बनाबना ! इसलिये आप भी इस पाप से डर कर

कदम उठाना ! परन्तु इस नीच जैसा कलङ्कित कार्य भूल से भी न करना ।

पाठकगण ! इस जगह आप साध्वी स्त्री का अफसोस न करके, आप अपने आनन्दित मुंह से कहो कि ऐसी अखण्ड पतिव्रता स्त्री को एकवार नहीं किन्तु वारंवार धन्यवाद है ! और उस कामान्ध को कोटिश धिक्कार है !

अच्छा यह तो सब ठीक ! परन्तु यह तरुण पुरुष तथा साध्वी स्त्री कौन थी । क्या उनकी आप को मालुम पड़ी ? अच्छा ! यदि नहीं पड़ी हो तो मैं ही बताता हूँ कि तरुण उस रत्नगोरी को भेजने वाला रशिकलाल ही था तथा यह युवती कुल को दैदीप्यमान करने वाळी, सती साध्वी मोतीगौरी ही थी ।

नवां परिच्छेद ।

—::※::—

ज़हर का प्याला ।

मध्यमें रात्रि का समय होने से, प्राणी मात्र दिन के श्रम से थककर भर निद्रा में लो रहे थे, सर्वत्र शान्ति देवी का राज्य छा रहा था, कहीं २ पर श्वानों का भौंकना सुनाई देता था, किसी २ व्यापारी की दुकानें खुली देखने में आती थी और वह भी समय हो जाने से जल्दी २ दुकानें बन्दकर हिसाब की बहियां बगल में दबा खुद के गृह की ओर जाते नजर आते थे !

ऐसे समय में महाराजाधिराज शियाजीराव की सुशोभित राजधानी वीरक्षेत्रके 'आनन्दपुर' नामक ग्राममें एक साधारण स्थितिके मकानमें ऊपरके मञ्जिल पर एक मन्द २ दीपक जळ रहा है, पास ही कोई स्त्री पुरुष आमने सामने बैठे हुए हैं उनकी ग्लानि मुखकृति देखने से महत् अनिवार्य दुःख का भास्य होता

है, पुरुष के हाथ में एक ज़हर का भरा हुआ कांच का प्याला है, और उसे क्रोध युक्त मुद्रा से हाथ लम्बाकर, सन्मुख बैठी हुई स्त्री को पीने के लिये अत्याग्रह कर रहा है।

यहां प्रश्न उठता है कि- इस तरह एकाएक उस स्त्री को ज़हर देने का क्या कारण है? प्रत्युत्तर अभी ही मिल जायगा, ज़हर का प्याला मुंह के पास आने से वह स्त्री आना कानी करती है! कमज़ात! क्यों मानती नहीं है क्या तू सारी जाति में मेरी नाक काटना चाहती है? ऐसा पुरुषने कहा!

"पिताजी! जातमें तो क्या? परन्तु समग्र संसार में जब से आपने नौ हजार पर हाथ मार, नौ वर्ष के बालक के साथ मेरा विवाह किया था तभी से आपका नाक तो कटचुका है, अब काटने में बाकी क्या रहा है? चाहे आप जाति में बड़े हो फिरते क्यों न फिरो और मूंछे पर ताव क्यों न दो"!

विवाह किए अभी पन्द्रह ही दिन हुए थे कि वे तो काल के गाल में फंसगए और आपने तो अपने स्वार्थ साधन के लिये नौ हजार रुपये ले पापी पेट भर ही लिया। लेकिन मैं अब जीवन कैसे

बिताऊँगी, यह भी विचारा था।

प्रथम तो जब मैं पैसे लाती थी, तब तो आप जल्दी से लक्ष्मी के लालची बन ले लेते थे, जब मैं नए २ वस्त्र धारण करती थी, तब भी आपने नहीं पूछा कि ये सब कहां से लाती है? पूछो ही क्यों! आपको तो पैसे की पड़ी थी न! क्यों यह सत्य है न? और अब इतने क्रोधित हो मुझे ज़हर देने को तय्यार हुए हो! पिताजी! मुझे ज़हर दे एक तो स्त्री और दूसरी गर्भहत्या कर क्यों पाप बांधते हो! विचार करो! कि बाग का रक्षक बाग की रक्षा के निमित्त यदि उसके चारों तरफ मजबूत दीवाल नहीं करे तो उसकी सुगन्ध के मारे अनेक पशु उस में आ उसको नाश कर डाले तो उसमें बाग तथा पशु का क्या दोष? इसी तरह आपने अपने हाथसे पांव में कुल्हाड़ी मारी है इसी से मैं ज़हर नहीं पीती ऐसा पुत्री ने कहा।

"ज़रा धीरी मर! धीरी!! नीचे जाने आने वाला सुनेगा! जब तुझे ज़हर नहीं पीना था, तो पहिले ही से तैनें तेरा उपाय क्यों नहीं किया? जिससे आज तू मेरे धोले में, धूळ डालने तय्यार

हुई है ! जो तू सीधी राह से नहीं पियेगी, तो मैं तेरे पर चढ़कर बलात्कार से जहर पिला दूँगा, इसलिए कुछ भी आनाकानी नहीं करते पीजा ! क्यों उतारती है कि नहीं ! " पिता ने धमकी दे कहा !

पिताजी ! धोले में धूर तो पहिले ही पड़ चुकी ! यह बनाव कोई पहिला नहीं है ! ऐसे तो अनेक कार्य इस संसार में होते रहते हैं ! और उन्हें आप अपनी दृष्टि से देखते ही जाते हो तो भी आप कुम्भ-कर्णी निद्रा ले बाल विवाह को कब बन्द करते हो ? क्यों कि आपको तो पापी पेट पैसे से भरना है न ? और दुहिता को दुःख डाल क्रूर कसाई का काम करना है न ? तो मुझे आंखे लाल कर क्यों डराते हो ? मुझे तो मेरा प्राण बहुत प्यारा है !

जब से मेरे जानने में आया था, तभी से मैंने अनेक उपाय करना शुरू किया था, हजारों रुपए बरबाद करने पर भी मुझे कुछ सफलता प्राप्त नहीं हुई । इससे मैं लाचार हूँ ।

पिता मुझे जहर मत पिलाना, और आप हत्यारे मत बनना ! मेरे सुनने में आया है, कि राजनगर (अहमदाबाद) में मर्हुम महीपतराम, रूप-

राम नीलकण्ठ सी० आई० ई० के तरफ से एक विशाल अनाथालय खोलने में आया है, और उसमें मेरी जैसी विधवा स्त्रियां भी रक्खी जाती हैं तो फिर मैं आपसे नम्रता पूर्वक कहती हूं कि मुझे वहां छोड़ आओ प्रसूतकाल व्यतीत होने पर वापिस चली आऊँगी इससे यह बात कोई नहीं जान सकेगा और आप भी हत्या से बच जाओगे और इज्जत भी रह जायगी, पिता मुझे तो यही रास्ता उत्तम लगता है इसलिए अब आप अपने क्रोध को शान्त करो और मुझे जहर मत दो। यही इस दीन पुत्री की प्रार्थना है"।

"ठीक! तू और भी कलङ्कित काम कर मेरे कुल को बट्टा लगाती है क्यों? मनुष्य तो अन्धे ही होंगे? कि अभी तक कुछ जानते ही नहीं? नकटी! मैं तेरा सब चारित्र जानता हूं, परन्तु याद रख मैं तुझे पिलाए विना नहीं छोड़ने का! चल! यह प्याला ले! पीती है कि नहीं!" ऐसा कह लाल नेत्र विकाल चेहरे घुटने टेक, उसके मुँह पर एक जोर से तमाचा लगा दिया. तमाचा पड़ते ही वह विचारी भय से घबरा, हाथ में प्याला ले, आंखों में

आंसू डालती, गई ! गई !! जहर पीगई और दीर्घ निश्वास डाल प्याला जमीन पर डाळ दिया !

"हा......थ प्रभू ! यह पिता है की पापी ! कि जिसने जहर पाया मेरा प्राण लिया क्षण मात्र में ही पिया हुआ जहर शरीर में फैलगया, और वह धड़ाम से धरती पर गिरपड़ी ! मुंह में से भाग एक के उपर एक आने लगे, हाथ पांव तनाने लगे और बात की बात में एक दुष्कर्मी जीव कम होगया,

नीचे पुळिस की सीटी का भयङ्कर आवाज सुनाई दिया तब दो चार पुलिस मैन दोड़ आये और खूनी का मकान घेर ळिया ।

पाठकगण ! आप यहां यह शङ्का करेंगे कि यहां एकदम पोलिसमैन कहां से आए ? तो इसका समाधान करने के ळिए इतना ही ळिख देना काफी है कि "मरने वाली के हृदय विदारक वचन जहर दे अन्त में मेरा प्राण लिया " चौकी के बन्दोवस्त को जाने वाले पोलिसमैन ने सुन ळिया और वह अल्प-काळ मौन धारण कर उसी मकान के पास जा खड़ा हुआ पोलिसमैन ने उस आवाज को सुना बाद कुछ भी आवाज नहीं आने से कोई स्त्री

बलात्कार मारी गई ऐसी शंकाकर एकदम दूसरी पुलिस की मदद के लिये जोर से सिटी बजाई सिटीके सुनतेही पोलिसआफिसर तथा पोलिसमैन इत्यादि कई एक आदमियों ने आ खूनी का मकान घेर लिया और किवाड़ खोलने के लिये जोर २ से चिल्लाने लगे पोलिस की आवाज सुनतेही भीतर का मनुष्य एक दम घबरागया और भागनेके लिये इधर उधर राह देखने लगा किन्तु चारों ओर पहिरा देख बहुत घबराया इतने में फिर से आवाज आई कि जल्दी किवाड़ खोलो यह सुनतेही उस मनुष्य ने कांपते २ किवाड़ खोले खोलते ही पोलिस आफिसर ने उसे गिरफ्तार कर एक दम पोलिस मैंन के हवाले किया।

आफिसर इत्यादि भीतर घुस सब जगह बारीकी से देखने लगे, परन्तु कुछ भी पता नहीं लगने से वे घर के दूसरे मञ्जिल पर चढ़े जाकर देखा तो एक मृत स्त्री की देह तथा पास ही पड़ा हुआ ज़हर का खाली प्याला दीपक की मन्द २ रोशनी में नज़र आता था, इससे चालाक पुलिस तुरन्त ही जानगई कि खून करने वाला यही बदमाश है परंतु

फिर भी प्रथा के अनुसार पूछा कि बोल तू इस विषय में क्या जानता है?

पाठकगण! सिर्फ दो अक्षरों का "पाप" इस शब्द में कितना बल है! चाहे वह पाताल में भी क्यों न किया जाय, परन्तु तौ भी जाहिर होजाता है, पोलिस के महाप्रसाद से खूनी थर२ कांपने लगा, और सब हकीकत सत्य २ कही।

पोलिस आफिसरों ने दो चार इज्जतदार आदमियों को बुला, उनके सामने खूनी से सब हकीकत कबूल करा, मनुष्यों तथा खूनी की तलोळी बाद आरोपीको हथकड़ी पहिना, कांचके प्याले के साथ हवालात में बन्द किया, और मकान के आगे और पीछे के दरवाजे में आफिसर ने अपने नाम की सील मोहरदार ताला लगा, पोलिस का पहरा बिठा दिया।

सूर्योदय होने से सील मोहर तोड़ स्त्री के शव को, सिविल सर्जन के पास तपासने के लिये भेजा, सर्जन ने लाश को चीरा, ठीक तौर से जांच करने के बाद, लिख दिया कि, इस बाई को हमल होने के कारण से, सख्त से भी सख्त ज़हर दिया गया

है यह सुनते ही लाश फौरन वहां से लेजा कर जलाई गई !

पोलिस अमलदार ने डॉक्टर के सार्टीफिकेट के साथ, यह मुकद्दमा वही वार्टदार की तरफ रवाना किया, वहि वार्टेदार ने न्यायाधीश के तरफ, और न्यायाधीश ने हाईकोर्ट के तरफ इस मुकद्दमे को भेजा. मुकद्दमा चला, आरोपी पर जहर देने का आरोप साबित होजाने से फांसी की आज्ञा दी !

आज्ञा हो जाने पर तत्काल ही आरोपी फांसी पर लटका दिया गया ! थोड़े समय तक तो वह इधर उधर तड़फता, हाथों को फैलाता, मानों दूसरे व्यक्ति स्वप्न में भी ऐसा अघोर कृत्य न करें ऐसी शिक्षा देता हो ! इस तरह उसकी दुरात्मा पाप का घड़ा सिर पर धर, नर्क यात्रा भोगने के लिये संसार को त्याग चली गई ।

प्रिय पाठकगण ! यह कथन सुन आपके हृदय में भी अनेक विचार उत्पन्न हुए होंगे ! कि ये दोनों स्त्री पुरुष कौन थे ? किंतु धैर्य धरो ! यह पुरुष मदनपाल सेठ से चार हजार के पांच हजार कबूल कराने वाला, तथा ऊपर लोगे के पांच सो रुपये

खुदका पापिष्ट पेट भरने वाला, धर्मभ्रष्टों का शिरोमणि, इस वार्ता के नायक नगीनलाल का पुरोहित लोभीराम था, और यह स्त्री मोतीगौरी को बुरी सलाह देने वाली ओभीराम की पुत्री गंगागौरी थी. यह पुत्री संकट को निवारण करने के लिये थोड़े समय से यहां आई हुई थी, कई एक उपचार करने पर भी जब सफल मनोरथ नहीं हुई, तब अन्त में यह काम किया ! किये हुए अघोर कृत्यों का कुम्भ आज फूटा, और दोनों को योग्य दण्ड मिल गया !

जहाँ तक ऐसे नीच कार्य करने वाली कुल्टायें ! तैसे ही कन्या विक्रय की प्रचण्ड ज्वाला में कन्या रत्न को आहुती देने वाले, ऐसे स्वार्थान्ध पिता ! अरे ! नर राक्षस ! स्वार्थी बने रहेंगे वहाँ तक कम भाग्य ! भारत की उन्नति की आशा रखना व्यर्थ है !

नवयौवना ! कुसुम जैसी सुकोमल बालिका को कोई योग्य माली के हाथ नहीं देते. क्रूर ! कसाई !! के प्रचण्ड पग तले क्यों देखती हो ! . .

केवल पुत्री के द्रव्य पर मौज उड़ाने वाले, दुरा

चारियों! तुम्हारे ऐसे नीच कर्मों से ही आज हमारी पवित्र भूमि अपवित्रता को पा, शुष्क मरु भूमि बन रही है! तुम्हारे पेट का चाहे, तुम पाताल में जा गड्ढा भरो! चाहे पांव घिस २ कर मरजावो! परन्तु हमारी निर्मल नीर वाली! सुन्दर सती रूप सुकोमल बालिकाओं को, खारे समुद्र में ढकेलने का तुम्हें क्या हक्क है?

तुम्हारे अघोर कृत्यों से ही आज ऐसे २ कार्य दिखाई देते हैं। प्रभू! प्रभू!! ऐसे नर्क गामी वह राक्षस हमारी पवित्र भूमि पर कब तक रहेंगे?

हत् भागी हिन्द! अन्तःकरण से भावना कर कि जिससे ऐसे नीच! नर पिशाच! तेरे पर जन्म नलें!

प्राचीन काल के पवित्र ऋषि मुनियों की आत्म कथायें याद आये विदून नहीं रह सकती कि कलि-युग में "चमड़े के रुपये चलेंगे" सचमुच में! वर्त्तमान काल में! जगह २ ऐसा ही दिखाई देता है, कि बिचारी कन्याओं का चाम बेचा जाता है?

एक पशु के माफिक पुत्री को नीलाम रूप में बेचकर, निर्दोष बालिका को हमेशा के लिए दुःख के कूप में गिरा देना! कितनी भारी क्रूरता कितनी भारी अधमता!

अरेरेरे !!! एक तरफ जब देश वत्सल महापुरुष देशोन्नति के सर्वोत्कृष्ट कार्यों में उमर विता प्रगट में आ ! प्रजावर्ग को सुधारने का सतत् प्रयास कर रहे हैं, तब दूसरी ओर ऐसे जीवित जीव को बेचने वाले, नीच असुर ! अरे ! क्रूर कसाई ! कहीं जुदा ही झुण्ड जमा, देशोन्नति के प्रसंशनीय कार्य्य में आड़े आ आगे बढ़ने नहीं देते ! धिक्कार है ऐसे पुरुषों को !!!

जमाई को पहिले से लुटेरे बन लूट लेते हैं, तो फिर पुत्री के सुख प्राप्ति की क्या आशा है ! सिर्फ आपत्ति ही समझना चाहिये !

विवेकी ! वाचकवृन्द ! इसका विचार करो ! धतूरे का बीज बो आम खाने वाले को सहस्र बार धिक्कारो !!!
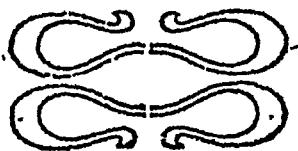
दसवाँ परिच्छेद ।

पश्चाताप और मृत्यु ।

यङ्कर काली रात्रि ने अपना प्रभाव पृथ्वी पर डाल रक्खा था सर्वत्र अन्धकार फैलगया था, आकाश में नक्षत्रगण, टिमटिमाहट के अल्प प्रकाश से अन्धकार को दूर करने का मिथ्या प्रयत्न कर रहे थे, संसार का हरएक व्यक्ति अभी, दिन के परिश्रम से लोथ पोथ हो निद्रा देवी की आराधना कर रहा था ! सर्वत्र शांतना छाई हुई थी, सिर्फ कोई २ वक्त घू, घू करता हुआ रात्रि का राजा उल्लू पक्षी का नाद तथा उठो, उठो, करते सियारों की आवाजें सुनाई देती थी, वृक्ष पर शुष्क पत्रों में, सर्पादि प्राणी इधर से उधर खर्द और सरर्र की आहट करते, मानवी हृदय में भय का बीज पैदा कराते थे, सर्वत्र शांतता होने से श्रवण करते ही होश उड़ जाय, ऐसे व्याघ्र, सिंह, रीछ, चीते इत्यादि जँगली प्राणी दूरके जंगलों

में चिल्लाते, वृक्षों पर ठहरे हुए, पक्षियों को त्रास देते, वन को गुँजाते, स्वतन्त्रता से फिरते थे, निशाचर भी खुद के कार्य के लिए जल्दी से रास्ता माप रहे थे, कोई समय पहिरेदारों की ओर की आवाज सुन नगरवासियों की शांतता भङ्ग हो जाती थी, ऐसे समय में बनास नदी का काला पानी शांत था, कोई २ समय जलचर प्राणी उसकी शांतता में बाधा डाल देते थे, किनारे पर वृक्षों की शाखायें भूतों का दृश्य दिखा रही थी।

ऐसे समय में एक भिखारी गाता जाता था, और रोता जा रहा था, अन्धकार जैसा का तैसा ही था, इस श्रम से व्याकुल हो, भिखारी पृथ्वी पर ही पड़ा रहा।

इतने में खुद की प्राण वल्लभा रजनी देवी को ज्यादे देर तक दुःख में नहीं रखते, उसका ग्लान मुख हर्षित करने के लिए, पूर्व दिशा की ओर से नभोमण्डल में से चतुरचन्द्र खुद का दर्शन देने के लिए बाहिर निकला, उसकी प्रिया रजनी देवी ने श्याम वर्ण की साड़ी को फेंक, रूपेली साड़ी अपने अङ्ग पर धारण करली, और सप्रेम अपने प्रियतम

चतुरचन्द्र के साथ परमानन्द से प्रीति का पान करने लगी !

नदी का श्याम प्रवाह भी चमकाहट मारने लगे, अन्धकार मय जंगल उजला दीखने लगा, काले मुंह वाले अन्धकार का राज्य उठगया।

चन्द्रमा के तरफ कटाक्ष करता हुआ दुःखी मुसाफिर बका "नीच! मुझ दुखी को क्यों सताता है! गरीब पर प्रहार करना क्या सज्जन का धर्म है! ऐसा कह फिर मौन धारण करली।

कुदरत की दी हुई रेत की रजाई पर यह मुसा फिर पड़ा हुआ था; शरीर बिलकुल नङ्गा था, सिर्फ एक गन्दा मैला कपड़ा ओढ़े हुए था, सूक्ष्म दृष्टि के देखने से वह असीम व्याधि से पीड़ित हो ऐसा मालूम पड़ता था, शरीर शुष्क काष्टवत् होगया था चेहरा फीका पड़ गया था, नेत्र भी दुखित दिन नहीं देखे जाने से गहरे पड़ गए थे! सारांश कि वह बहुत अलक्ष था।

एक दीर्घ निश्वास डाल वह बिचारा उठा रात्रि के सख्त शीत से धूजता मैला पकड़ा सम्भाल, फिर बका:—

"जो शरीर इतर मर्दन करने से सुगन्धित था।
वही आज इतना दुर्गन्धित होरहा है कि कोई पास
तक नहीं बैठना चाहता, जो शरीर निरन्तर सुख
शय्या में शयन करता था, वही शरीर आज पृथ्वी
के पृष्ठ भाग पर रेतीली भूमि में पड़ा है, जिस म-
स्तक पर क़ीमती पगड़ी शोभित थी, वही मस्तक
आज कुदरती वालों से लदा हुआ है, जो बदन
विविध वस्त्रा-भूषणों से सदा विभूषित रहता था,
वही बदन आज बिलकुल खुला होने से रात्रि का
ठण्ड सहन नहीं होने से थर २ कांप रहा है, जो
मुखारविन्द पूर्व के प्रभात पान के साथ २ चाय
क़ाफी के बिना एक पल भर भी नहीं चल सकता
था, वही मुखारविन्द आज रक्त पित्त की बेहद
व्याधि से पीड़ित होरहा है, जो हमेशा विलायती
फैशनेविल किनारे के बारीक धोती जोड़े के सिवाय
पहिनता ही न था, उसेही आज कंगाल स्थिति द-
र्शाता हुआ फटा वस्त्र पहिना हुआ दृश्यमान हो
रहा है, जिस शरीर पर ग्रीष्मऋतु की गर्मी सहन
नहीं होने से पंखे ढोले जाते थे, वही शरीर आज
निर्जन स्थान में निराश्रय पड़ा हुआ है, जिसके रहने

के लिये बिजली लाइट का वाम्बे फेशन का बंगला था उसेही आज रेती का आश्रय लेना पड़ा है ?

प्रभू ! प्रभू !! ऐसी उसकी फकीरी हालत देख किसका हृदय द्रवि भूत नहीं होता होगा ? प्रभू ऐसा दुःख दुश्मन को भी न हो ! किन्तु यह फल उसके दुष्कर्मों का ही था जो कि आगे ज्ञात हो जायगा ।

विषम वेदना का बार बार शब्द चिल्लाने से उस विचारे का स्वर भंग होने लगा ! मौत उसके चारों ओर फिर रही थी और वह भी दुखित हो मौत ही की राह देख रहा था, वह कभी तो नेत्रों को बन्द कर लेता और कभी खोल लेता था, और कभी कभी एकदम आतुर हो बक भी देता था इस तरह उसके नेत्र बन्द होगये ।

पुत्री ! ऐ प्यारी पुत्री !! तैनें जो पत्र में सत्य २ अक्षर लिखे थे तथा तेरी सद्गुणी माता ने जो २ शब्द कहे थे वे हरएक शब्द मुझे अब बोधदायक मालूम पड़ रहे हैं, और मेरे शरीर को तीर के मानिन्द बेध रहे हैं ! और पुत्री ! पत्र में तुमने मेरे नामको "जहरी सांप, राक्षस, चमार, चण्डाल,

कसाई, कट्टर दुश्मन इत्यादि जो विशेषण लगाये थे वे सब योग्यही थे ।

पुत्री ! विवाह होते ही तू विधवा होगई ! हा............य मैं कितना पापी ! कैसा घातकी ! कैसा राक्षस ! कैसा दुष्ट ! कैसा कृतघ्नी ! कैसा निष्ठुर ! कैसा निर्दयी ! कि पुत्री ! तेरी मुझे जरा भी दया नहीं आई ! धिक्कार है मेरे जैसे पुत्री के पैसे लेने वाले पापी पिताओं को ! मेरे जैसा पुत्री का पैसा ले, कसाई का कृत्य कर, अपने स्वार्थ के लिये लड़की को दुःख रूपी समुद्र में फेंकनेवाले के मुंह पर हजार बार थूंको !

पुत्री ! विवाह होने के बादही तेरी माता पेट भर भोजन नहीं करती थी, और फिर तेरी वैधव्य-कथा सुन चिन्ता ही चिन्ता में सूखकर कांटा हो गई, हा.........य अभी वह कहां है ? इसका भी पता नहीं है । पुत्री ! ओ मेरी प्यारी पुत्री !! इस तेरे पापी पिता ने तेरे सहित पन्द्रह हजार रुपये ले उनसे देश विदेशों में दुकानें खोलीं; रहने के लिये सुन्दर बंगले बनवाये; अनेक आभूषण बनवाये; अनेक नौकर रख मैंने वैभव भोगा ।

किन्तु थोड़े ही समय बाद व्यापार में टोटा पड़जाने से और मुनीमों की बदमाशी से सब दुकानें उठगईं; मकानों में आग लगगई; बंगले आभूषण इत्यादि सब बिकगये, वारण्ट पर वारण्ट कैद के लिये निकलने लगगये, इसलिये मैं जी लेकर भाग गया और भिखारी की हालत में इधर उधर भटकने लगा! अन्त में फिर भी रक्तपात के रोग से पीड़ित हो इस दशा को देख रहा हूँ !!

सचमुच में किये हुए कर्म एकला ही भोगता है! इसका मुझे पूरा अनुभव होगया है! पुत्री! मैं अब इस व्याधि से छूट भी नहीं सकता! और अब मैं छूटना भी नहीं चाहता यही मेरी प्रार्थना है! क्योंकि मैं अब कलंकित मुंह ले दुनियां में फिरना नहीं चाहता! इससे तो आत्मघात कर मरना ही अच्छा है, ऐसा मेरा अन्तःकरण कबूल करता है!

पुत्री! इस तेरे पापिष्ट पिता ने लक्ष्मी के लोभ में पड़कर तेरा भविष्य अपने हाथों से बिगाड़, कसाईरूप बन, ग़रीब गाय की गर्दन मारी! इस बात की ज्वाला मेरे को जला रही है, हा⋯⋯य!

मैंने जी कर क्या किया ? क्या श्रेय किया ?

थोड़े ही समय बाद फाँसी की जगह दिखाई देने लगी, और फाँसी की तख्ती पर खड़ा हुआ मनुष्य कहने लगा कि:—"मेरी मौत को देखने के लिये आने वाले मित्रो ! मरते समय मैं आपको देख अपना अहोभाग्य समझता हूं ! कारण कि मेरे जैसे नीच पुरुष की मौत कोई निर्जन वन में, कि जहां मनुष्य का नाम भी न हो, वहाँ अन्न-जल बिना ही होनी चाहिये थी, एकाध मिनिट बाद मैं प्रचण्ड-दन्त और भयानक कृति वाले यमराज के पास पहुंच जाऊंगा !"

"कहना इतना है कि मेरी यह दशा देख, यदि आपका हृदय पसीजता हो, तो मेरे जैसा कसाई का काम कभी मत करना। और अपनी ग़रीब गाय जैसी किशोर वय की कन्या को स्वार्थी बन मौत की राह देखते बूढ़े को देते समय अन्तःकरण में खूब विचार कर लेना ! संक्षेप में कन्या विक्रय के क्रूर कृत्यों से हमेशा दूर ही रहना ! पाटिया खिसका, बोलती हुई आकृति तड़फने लगी ! मुसाफिर कांपे !

फिर से वह मुसाफिर बका ! अरे अभागे ! उठ जल्दी उठ ! लकड़ी टेक कर भी उठ ! उठ ! उठ !! उठ !!! उठे सिवाय छुटेगा नहीं ! उठकर धीरे से कदम भर ! देख यह तेरे सन्मुख क्या दिखाई देता है ! आज तुझे इस सरितादेवी की शरण लेनी पड़ेगी ! क्यों पीछे पड़ता है । कसांई का काम करते जरा भी तुझे लाज नहीं आई थी ? तो फिर निर्दोष पुत्री का श्राप भी क्यों मिथ्या हो । चल आगे हो ! तुझे तेरे अघोर कृत्यों का फल मिलना ही चाहिये ।

व्याधिग्रस्त मुसाफिर खड़ा हो फिर से बैठ गया, एक दीर्घ निश्वास डाल फिर से उठा और चलने लगा, मन्द २ गति से किनारे पर आ पहुंचा हिमवत शीतल पानी में उतरा, ठण्ड तो ऐसे बज रही थी कि बिचारा मुसाफिर थर थर काँपने लगा, चन्द्रमा धीरे धीरे आकाश में चढ़ता जाता था, ऐसी दशा में वह दुःखित पुरुष वहां ही खड़ा हुआ अनेक तरह का विचार करता रोने लगा, तत्पश्चात् शान्त हो एकान्त बैठगया ।

इतने ही में एकदम गाना सुनाई दिया,

और वह तुरन्त ही चमका, और विचारने लगा कि "यह तो पवित्र देवी निर्मला की आवाज़ ! हा ! उसी की आवाज़ मालुम पड़ती है कि सचमुच में निर्मला ! तेरी संगति का एक २ कीमती शब्द, इस समय कुल्हाड़े रूप बन, मेरे मस्तक को चीर रहे हैं। तू कहां बोली ? निरुत्तर क्यों बनी ? देवी कुछ तो दया कर ! इस पापात्मा को अपने पवित्र दर्शन दे शान्त कर ! अहा हा !!! क्या प्रिया की आवाज़ ! नहीं ! नहीं !! इस जङ्गल में वह यहां क्यों हो ! वह तो विचारी न मालूम कहां शीत उष्ण सहती हुई, भटकती फिरती होगी, हाय ! उसका क्या हाल होगा ! . . . . .

निर्भागी मन अभी भी तेरी मन्सा इस ज़हरी सांसारिक सुखों में ही रही है । क्यों ? तुझे क्या ? निर्मला हो अन्यथा कोई और ही हो ! कोई भी हो इसकी तुझे क्या आवश्यकता है ? अब थोड़े ही समय के लिये तुझे इस योनि में रहना है इसलिये शोकातुर न हो । . . . .

इस तरह कहता २ वह पथिक आगे बढ़ा; सब पाप कर्मों का पश्चाताप करने लगा, इतने में ही

स्वामिन ! स्वामिन !! स्वामिन !!! के शब्दोच्चारण करती हुई किसी स्त्री ने आ हाथ पकड़ लिया। वह पथिक एकदम चौंक पड़ा, फिर कुछ धैर्य्य धर प्रश्न किया कि "इस भयानक रात्रि में तू कौन है ?" स्त्री निरुत्तर हुई।

"क्या तू वन देवी है ? कि भूत, डाकिन, पिशाच है ? बोल जल्दी बोल मेरे जैसे दुःखित प्राणी को क्यों सताती है ?

"प्राणनाथ ! मेरे प्रभू !! क्या आप मुझे नहीं पहिचान सके ? दासी पर कुछ भी दया नहीं करते, निद्रित अवस्था में ही छोड़कर चले गये। प्राणेश ! यह तो मैं आपके सुख दुःख की आधे हिस्से वाली "अर्द्धाङ्गनी' ऐसा कहते २ ही सजल नेत्रों से गले में चिपक गई।

विचारा पथिक अच्छी तरह से देखने पर, टूटे फूटे शब्दों द्वारा गद्गद् हो कहने लगा कि—
"कौ ··· न ·········है·········दे·········वी···
······ नि·········र्म·········ला ? तुम एकाएक यहां क्यों ? अरे ! यह कमलवत् प्रफुल्लित गौर गुलाबी गाल की लाली एकदम फीकी पड़गई। हाय !

तेरा सर्व शरीर सूखकर काँटा होगया। हे प्रिया तुम्हारी भी यह दशा ? मुझे क्षमा करो ! मैं आपका पल पल का अपराधी हूं ! तुम्हारी यह दुर्दशा इस दुष्टात्मा ने की है ! देवी मुझे क्षमा करो ! फिर कहता हूं कि क्षमा करो !" ऐसा कह पथिक रोने लगा।

"प्राणेश ! प्राणेश !! यह क्या, आप क्यों घबराते हैं ? क्या आपका हृदय ऐसा होना चाहिये ? धैर्य्य धरो ! मेरे प्रभू धैर्य्य धरो !! यह तो हो ही जाता है ! इतने क्यों घबराते हो ? मनुष्य मात्र भूल करता है, होनहार मिट नहीं सकती। परन्तु किये हुए कर्मों का पश्चाताप करो, कि जिससे भविष्य सुधर जाय" स्त्री रो कर समझाने लगी।

रमा ! जो कि तेरा कहना अक्षरशः सत्य है तो भी तुझसे विनय करता हूं कि "मुझे इस समय तू कुछ मत कह ! कारण कि यह जीवन अब मुझे भार स्वरूप मालूम पड़ता है अब मैं अपना निर्लज्ज मुँह संसार में दिखाना नहीं चाहता, यही मेरा अटल सिद्धान्त है ! इसलिये अब तू आगे जा मुझे मत अटक ! व्याधिग्रस्त पुरुष ने कहा !

प्रभू ! भलेही ! आपका जब ऐसा निश्चय है ! तो इस रंक दासी को भी सेवा में साथ रखना। जहाँ देह वहाँ ही छाया। क्योंकि चन्द्र विना रजनी शोभा नहीं देती ! मैं भी मेरा जीवन आपकी संरक्षता सिवाय बिताना नहीं चाहती"

स्वामीनाथ ! आपके स्वर्गस्थ होने के बाद झूर झूर कर मरना, इससे तो आपके साथ रहकर आपकी सेवा करना ही श्रेय समझती हूं, इसलिये इस अर्द्धांगी को साथ आने के लिये कृपाकर आज्ञा देओ" स्त्री ने अपना भाव दर्शा कर कहा।

सती ! हे सती !! मैं ईश्वर का अपराधी हूं ! किन्तु तू निर्दोष होते हुए भी इस तरह आग्रह करती है, तो प्रिया..............लाचार ! भलेही !!

ऐसा कह दुःखित दम्पति परस्पर एक दूसरे का हाथ पकड़ पानी में आगे आगे बढ़ने लगे ! पानी पाँव से कटि, कटि से सीना, सीने से ग्रिवा ग्रिवा से मुंह और मुंह से आखिरी मस्तक पर फिरगया ! पानी सिर पर फिरते ही चारों ओर शान्तता छागई, नदी का जल भी शान्त होगया,

मानों इन प्राणियों के दुख के सम्बन्ध में, रंज कर रहा हो ।

पाठकगण ! इस तरह ये स्त्री पुरुष बनास नदी को अपने प्राणों का भोग देने वाले कौन थे ? वह वही लोभी नगीनलाल था और यह स्त्री स्वर्ग गामी मोतीगौरी की माता निर्मला थी ।

एकादश परिच्छेद ।

सुज्ञ और प्रज्ञ पाठकगण ! इस कथा का अन्त आजाने से, आपका हृदय क्या कबूल करता है ? अब यह तो निर्विवाद सिद्ध होगया है, कि कन्या-विक्रय अनीति का पैसा बुरे रास्ते को ओर ही खर्च होता है। तात्पर्य यह कि यह पैसा बिजली के अनुसार उड़ जाता है, यह तो दूध का दूध और पानी का पानी में ही रह जाता है।

विचार करो ! कि कहां गई नगीनलाल सेठ की देश विदेश की प्रख्यात दुकानें ? कहां गये उसके विलायती फेशन के सुन्दर बंगले ? कहा गई उसकी सूर्य्य समान प्रकाश करने वाली विजबियां ? कहां गई उसकी चार अश्व की फिटिन ? कहां गए उसके शयन करने के छत्र. पळंग ? और कहां गये उसके ग्रीष्म ऋतु में शीतल पवन देनेवाले मनोरंजक पंखे ? कि जिससे आज इस निर्जन बन में मरने का समय आया !

सुज्ञ बन्धुओ ! आप समझ गये होंगे कि उसकी यह दशा उसकी गरीब गाय जैसी पुत्री, मोतीगौरी के अन्तःकरण की हाय का यही फल है ! इसलिये अब यह तो सिद्ध होगया कि खरी कमाई का पैसा ही ठहर सकता है, और वही सुखदाता है, और अनीति का द्रव्य आपत्ति देने वाला ही है, इसलिये आप कन्या विक्रय के दुष्ट रिवाज में फँसकर, लक्ष्मी के लालची हो, आप अपनी पुत्री को दुःख के दरियाव में डुबा, नगीनलाल जैसे निर्दयी बन नर्कगामी मत बनना ! भला !

तैसे ही वृद्धावस्था में मदनपाल के माफिक विवाह करने की आकांक्षा में पैसे को धूल में मिला विचारी अनाथ बालिका का भव बिगाड़, मन में आनन्दित होने के बदले, उतनी ही लक्ष्मी को परोकार में खर्च कर, अनाथ मनुष्यों की शुभासीश पाने में आप आनन्द मनाना ! कि जिससे आपका कल्याण हो !

रसिकलाल ने जिस तरह खुद के परम प्रिय मित्र मदनपाल की स्त्री मोतीगौरी के ऊपर मोहित हो, उसे अकेली आती देख, दुष्ट वांछा परिपूर्ण

करने जाते हुए क्षणमात्र में खुद का ही प्राण गुमा घोर नरक के रास्ते गया ऐसा नीच कार्य्य करते हुए डरना ! कारण कि पाप का कर्म कभी भी प्रगट हो । लोभीराम को जैसे फांसी पर लटकाया, और रत्नगौरी को जैसे विष खाना पड़ा, वैसा ही फल आपको मिलेगा । इसलिये ऐसे दूषित कर्मों से हमेशा बचे रहना !

मोतीगौरी को खुद के कपट जाल में फंसाने आने वाली, रत्नगौरी जैसी कुटिलाओं की संगति करते, हे ! मेरी प्यारी बहिनों ! आप सदा सावधान रहना ! और आपका पातिव्रत-शीलव्रत रखने के लिये, मोतीगौरी के माफ़क चाहे प्राण भी चले जायं, तो भी जाने देना ! किन्तु रत्नगौरी ने जैसे खुद के दुष्कर्म से गांव; पर गांव में चारों ओर बदनामी पाई, और अन्त में विष से काम पड़ा । अकाम मृत्यु पा, मां बाप को कलङ्कित किया, वैसे ही तुम भी तुम्हारी कंचन तुल्य काया को; कौड़ी तुल्य कर मां बाप का मुंह काला मत करना । किन्तु इस कथा की नीतिज्ञ नायिका निर्मला ने खुद के पति के दुःख से दुःखित हो, आप

को भी प्यारा नहीं गिनते, स्वामी के साथ ही पानी में प्रवेश कर शरीर को त्याग दिया। इस तरह बहिनों आपभी अखण्ड पति भक्ति करने में पीछे मत हटना !

ऐ! उच्च पंक्ति में गिनने वाले, भूदेवो ! आप भी पापिष्ट पुराणी बाबा लोभीराम के अनुसार लक्ष्मी के क्षणिक सुख से लुभा, सिर्फ खुद के स्वार्थ के लिये आप अपने पवित्र हाथ काळे कर, यजमान की विचारी निरापराध बालिका का खून जला, उनकी सुखी जिन्दगी को जीवन भर दुःख में डालने के लिये, आप अपना पांव आगे मत बढ़ाना ! किन्तु आप अपनी ऐसी कुबुद्धि को हमेशा आहुति देते रहना !

अब मैं इतना कह बंद करता हूँ, कि इस मेरी छोटी पुस्तक में से दूषण दूर कर, हंसवत् सद्गुण मात्र ग्रहण करना ! कारण कि शुद्ध कर्त्तव्य परायण से सुख, संतोष, और आनन्द अवश्य मिलता है। संक्षेप में सद्गुण से सुख और दुर्गुण से दुःख ही प्राप्त होता है !

प्रिय पाठकगण ! बस ! इस कथा का सारूप

यह उपसंहार इस प्रमाणे समाप्त करता हूँ और इस जगह पाठक और लेखक का सम्बन्ध पूरा करता हूँ !

इस किताब में से प्रिय पाठकगण ! यदि आप यत्किञ्चित भी गुण ग्रहण करोगे तो मेरा किया हुआ परिश्रम कितने ही अंशों में सफल हुआ मान आपका कृत्य कृत्य होऊँगा !

स्थम्भ-तपस्वी जी श्री देवजी ऋषीजी

मूल संस्थापक-श्रीयुत गिरधारीलालजी
अनराजजी सांखला बेंगलोर

संस्थापक-श्रीयुत मुलचन्दजी छाजेड
जेतारण।

श्री सँघ बम्बई।

मुख्य संरक्षक-श्रीयुत विजयराजजी मूथा
ब्यावर

,, सिरेमलजी बोहरा
ावर

,, विजयराजजी चौधरी
ब्यावर